

वीरांगना
अरुणा आसफअली



श्रीमती अरुणा आसफअली

वीरांगना से

पराधीनता की बेड़ी को ।
  झटक झटक कर तोड़ रहीं ॥
एक ज्वाला बनकर तुम प्रकटीं ।
  चिनगारी जिसकी फूट रहीं ॥

बालापनमें जोगन बनकर
  जीवनको पलटाती थीं तुम ॥
अब बदल गया रुख ऐसा कुछ ।
  भारतको पलटाती हो तुम ॥

सन्देश लिए 'नारी मन' का ।
  एकताको अपनाया तुमने ॥
हिंदू मुस्लिमका भेद मिटा ।
  रूढ़ियोंको ठुकराया तुमने ॥

एक नई क्रांति देवी बनकर ।
  एक नया प्रकाश दिया अरुणा ।
भारतकी नरक यातनासे ।
  उपजी तेरे मनकी करुणा ॥

तब उतर पड़ी जीवन पथमें ।
  जीवनको छोड़कर रणपथमें ।
रणमें भी शांति वहाँ तो थी ,
  मुँझलाई तब तुम रणमें ॥

कुछ नहीं समझमें आया तब ।
  किस ओर बढ़े, कैसे लड़कर ॥
इस शांतिमयी रणभेरीसे ।
  पायेंगे कैसे शांति अमर ?

तब वही मार्ग तुमने पकड़ा ।
  अज्ञात बना भारत ज्वाला ॥
भीतर ही भीतर सुलग सुलग ।
  उभराया हिंदको रणनाला ॥

आज़ादीका वह नया मोल ।
  बतलाना तुमने भारतको ॥
रण ही देगा आज़ादीको ।
  दिखलाया तुमने भारतको ॥

'दर्शन'

वीरांगना

अरुणा आसफअली

संपादक

सुरेश गांधी

अनुवादक

द. गो. लाड 'दर्शन'

'अरुणा मेरी पुत्री है, भले ही वह विद्रोहिणी हो, या मेरे घरमें पैदा न हुई हो, पर मेरे लिए तो वह हर हालत में पुत्री ही रहेगी।"

—महात्मा गांधी



वोरा एन्ड कंपनी पब्लिशर्स लिमिटेड

३ राउंड बिल्डिंग, कालबादेवी रोड, बम्बई २

प्रथम बार—अप्रैल, १६४६

कीमत दो रुपये

मुद्रक—के पी शाह ओरिअन्ट प्रीटिंग हाउस, नवीवाडी, बबई न २
प्रकाशक—एम के वोरा वोरा एंड कपनी पब्लिशर्स लिमिटेड
३ राउण्ड बील्डिंग, बबई २

विज्ञप्ति

आज कोई भी भारतीय वीरांगना अरुणासे अनजान नहीं, सब उसे जानते हैं, और एक गौरवके साथ। अज्ञातवास से प्रकट होनेके बाद भारतकी जनताको उन्होंने जो प्रोत्साहन दिया है वह उनके हृदयमें चिरस्मरणीय रहेगा।

मूल-लेखक (या सम्पादक) श्री सुरेश गांधी, राजनीतिक और विशेषकर क्रांतिकारी साहित्यसे विशेष परिचित हैं, इस विषयमें उनका अध्ययन भी पर्याप्त है और वे ही इस पुस्तक के लिखनेके उपयुक्त अधिकारी हैं। जब मुझे पुस्तकका विषय और भाषाशैली रुच गई तो इच्छा हुई कि इस सामयिक और गौरवमय विषयसे हिन्दी भाषी भी परिचित हों, सो यह अनुवाद आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

मैं राजनैतिक साहित्यका विशेष जानकार नहीं, इसलिए मूल पुस्तकको ज्यों की त्यों रहने देनेकी चेष्टा की है, आशा है पाठक इस सामयिक विषयको पाकर सन्तुष्ट होंगे।

बम्बई
१२ अप्रैल १९४६

अनुवादक

विषय—सूची

इस तरह जो समझौता होगा इसकी सम्पूर्ण सत्ता पूँजीपतियोंके हाथमें होगी।

वायसरायने केन्द्राय असेम्बलीमें कहा है कि हिन्दुस्तानकी आजादीके लिए कोइ तारीख निश्चित करनेमें मुझे समझदारी दिखाई नहीं देती। पर हम उनसे कहेंगे कि चाहे हम अगस्त आन्दोलनमें कामयाब न हुए हों, फिर भी तारीख निश्चित करनेका सवाल वायसरायके बूतेकी बात नहीं है। अगर आज हिन्दुस्तान सचमुच तैयार हो तो तारीख निश्चित करनेवाले लॉर्ड वेवल न होकर हिन्दुस्तानकी कटिबद्ध जनता वह दिन निश्चित करेगी। असेम्बलीमें वायसराय भले ही लम्बे-चौड़े भाषण करें, और उसके मेम्बरोंको भले व्यवहारकी सीख दें, पर मैं आज उन्हें और उनके देशवासियोंको ऐसी सार्वजनिक सभामें आकर भाषण करनेकी चुनौती देती हूं। मैं उन्हें असेम्बली के बंधेबंधाये मकानमें नहीं बल्कि यहाँ जनताके सामने आकर कुछ कहनेका चेलेन्ज देती हूँ।

सन् १९४२ की वीरांगना अरुणामें, जो कोमलांगीमेंसे क्रान्तिदेवी बनकर प्रकट हुई है, सरकारके लिए जरा भी संकोच या दुराव नहीं है। वे एक स्वदेशाभिमानी नारीके उपयुक्त, साफ साफ शब्दों और हृदयकी गहराईसे निकले हुए उद्‌गारोंको जनताके सामने प्रस्तुत करती हैं, जिसके अक्षर अक्षर में सत्य गूँज रहा होता है। देशकी आजादीका मुक्तिमन्त्र फूँकनेवालोंके लिए वाणीको सजाना व्यर्थ लगता है, क्योंकि उन्हें उस अलंकारके पीछे छुपानेके लिए कुछ भी नहीं होता। वाणीका अलंकार, वैभव या सुन्दरता उनके [illegible] नहीं है जो राजनीतिके साथ आजादीकी कशमकशमें अपने आपको [illegible] चुके हैं। जिसने देशके चरणोंमें अपना [illegible] कर दिया है [illegible] लिए पहली समस्या देशकी आजादी है, [illegible] [illegible] है।

सन् १८५७ की [illegible] ४२ की [illegible]
क्रांतिकी नायिका वीरांगना अरुणा [illegible]
निकलते हुए अध्यायों या प्रकरणोंकी तरह [illegible]
वाक्योंसे भरा हुआ है, वह निर्भय और [illegible] किन

बनी हुई होगी ? आश्चर्य तो इस बातका है कि एक भारतीय संस्कृति और नारीत्वके अनुकूल कोमलता और सौंदर्य होते हुए भी, उनमें प्रखर विद्रोही की दृढ़ता और चेतनाकी प्रोज्ज्वल ज्वाला दहक रही है।

बीसवीं सदीके आधीके करीब बीत जाने पर भी भारतमें स्त्रियोंका स्थान कहाँ है ? क्या विवाहित स्त्रियाँ समाज या देशकी सेवा कर सकती हैं ? विवाह करना स्त्रीके लिए बाधक है या प्रगतिकारी ? ऐसे अनेक प्रश्नोंके जवाब हम श्रीमती अरुणाके जीवनकी घटनाओंसे मिलते हैं।

संसारके इतिहासमें, बीसवीं सदीकी अपनी एक खास जगह है जो हमेशा याद रहेगी। यह सदी संघर्षकी है। सन् १८९९ से १९३९ तक छोटे और बड़े दर्शोंमें संघर्ष और युद्ध लगातार जारी रहा है, और साथ ही साथ इस शताब्दिमें नये और पुरानेकी कीमतोंमें जो भी परिवर्तन हुए हैं वैसे परिवर्तन और पुरावर्तन किसी भी कालमें नहीं हुए। हमें इस नये युगके परिवर्तनोंकी नई कीमत आँकनी होगी, आज श्रीमती अरुणाके जीवनके सहसा परिवर्तनने हमें और हमारे समस्त व्यक्तित्व दृष्टि, विचार और भावनाको उनमें जानेवाले नारी गौरवका नित्य नया मूल्यांकन करनेके लिए आकर्षित किया है।

'सोलमाट्' शब्द श्रीमती अरुणाके लिए उपयुक्त होगा। वे जो कुछ भी काम हाथमें लेती हैं, उसे वे सम्पूर्ण उत्साहसे साँचती हैं। अरुणाके लिए व्यर्थ जैसा कुछ भी नहीं है। सन् १९४२ के अगस्तके प्रथम सप्ताहमें ए आइ सी सी के चिरस्मरणीय अधिवेशनमें वे अपने प्रख्यात पतिके साथ बम्बई आई थीं। उस वक्त प्रसन्नमुद्रा और आस्थाकी दृष्टिसे जब वे ए आइ सी सी के मण्डपमें इधरसे उधर दौड़ती थीं तब उनकी जागृति और जीवन हमेशासे अधिक प्रोज्ज्वल लगता था। पुराने मित्रोंसे मिलती थीं, और नये नये मित्र बनाती थीं। उस वक्त किसे मालूम था कि यह कोमलांगी जो बिलकुल समाजकी पतंग ही लगती थी, क्या उसके हृदयमें इतना आत्मबल होगा भी ? तब कौन जानता था कि यही महिला दूसरे दिनसे भारतके क्रान्तिकारी संग्रामकी सेनानेत्री बनेगी !

उनकी सफलताएँ हमारा ध्यान उस ओर आकर्षित करती हैं। उनके पति भी कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्य थे। कमेटीकी गिरफ्तारीके बाद गोवालिया-

टेक मैदानमें फ्लागवंदनके वक्त अरुणाने ही वहाँ मुख्य स्थान लिया था। मैदानमें प्रचंड जनसमूह एकत्रित हुआ था, पुलिसने सख्तीके साथ जनताको वहाँसे बिखेरनेका प्रयत्न किया। उसी दिन अश्रुगैस लाठी चार्ज और गोलीके हुक्म जारी हुए। उस वक्त बचावका जरा भी प्रयास किये बिना, जिंदगीकी जरा भी पर्वाह किये बगैर अरुणा जनसमूहके बीचमें जहाँ थीं, वहीं खड़ी रहीं और लोगोंको दृढ़ताके लिए मदद देकर उन्हें प्रोत्साहित करती रहीं।

पुलिसके जुल्मोंसे बहाये गये निर्दोष खूनने और जनताकी दुस्सह यातनाओंने उनकी मानसिक क्रांतिको भड़का दिया। उस वक्त पहले पहल उन्होंने राजक्रांतिमें क्रियात्मक भाग लिया। उस वक्तकी मुद्दत ६ वीं अगस्त १९४२ से २६ वीं जनवरी १९४६ तक थी।

इस अवधिमें उन्होंने अज्ञातवासी क्रान्तिकारीका निम्न और आशंकित जीवन बिताया। आज एक नाम रखकर और कलसे किसी दूसरी ही उपाधिको रक्षा साधन बनाकर उन्होंने अपनी वह अवधि बिताई उनके अज्ञातवासकी अवधिमें ही माताकी मृत्यु हुई और मृत्युके अन्तिम क्षणमें भी वे उनके पास न रह सकीं। विधिने मरती हुई माता और विद्रोही पुत्रीके बीच में यह कैसा अन्तर डाल दिया था?

उस पूरी अवधिमें जासूसी पुलिस (C I D) उनके पीछे लगी हुई थी। विदेशी सरकारने इनको तोड़-फोड़ करनेवाली क्रान्तिकारिणीके रूपमें घोषित किया और इनके पकड़नेवालेके लिए ५०००) का इनाम मुकर्रर किया। हिन्दुस्तानके हर एक शहरमें उनको खोजने और पकड़नेके लिए आतुर होकर सरकारने अपने चतुर और योग्य जासूस, एजेण्ट और सी आय डी विभाग को उनके पीछे छोड़ा पर वे हमेशा ही उन सबोंसे अधिक सावधान और सचेत रहती थीं।

इस तरहसे उनके बारेमें बहुत सी बातें प्रकाशित हुई हैं। एक बार उनके किसी अज्ञात वासी साथीने उन्हें सूचित किया कि वे जहां रहते थे वह स्थान सुरक्षित न था, और शीघ्रातिशीघ्र उन्हें वहाँसे भाग जाना चाहिए। ऐसे समय कहाँ जाना होगा?

सहसा उन्हें एक विचार सूझा उसी दिन खबर अखबारमें विज्ञापन प्रकाशित हुआ था कि एक धनिक महिलाको एक ऐसी यूरोपियन नर्सकी जरूरत थी जो उस कुटुम्बके साथ रह सके। वे गोरा बनकर जल्द ही उस जगह जा पहुँचीं। वह धनी महिला उनके व्यक्तित्व और सौंदर्यसे इतनी प्रभावित हुई कि उसने अपनी 'यूरोपियन महिला' नामी नर्स छोड़कर उस जगह अरुणाको ही रख लिया। फिर एक बार यह रहस्यमय पंछी उड़ गया, यह खबर जब पुलिसको तलाश करनेपर लगी तब उसने फिर पीछा लिया।

एक बार श्रीमती अरुणा सग्रहणीसे पीड़ित होकर बीमार थीं उनका शरीर रोगोंके कारण अस्थिपंजरमात्र रह गया था, धीरे धीरे पाण्डुरोग (पीलिया) भी घर करने लगा था। उस वक्त उन्हें समझाया गया कि वे अपने एक जमादार मित्रके यहां रहकर इलाज जारी करें उनके अज्ञात वासी साथियोंके बहुत समझाने बुझाने और उनके इसरार करनेके बाद बड़ा मुश्किलसे उन्होंने वहां जाना मंजूर किया और वहाँ गई।

दूसरे ही दिन उनके मेजबानका कोई खास मित्र, जो एक बड़ा सरकारी अफसर भी था, पहलेसे किसी तरहकी खबर दिये बिना एकाएक यहां आ पहुंचा। उस कुटुम्बसे भीतरी सम्बन्ध होनेके कारण वह मित्र सीधा मकानके अन्दर चला आया और उसने उस मेजबान और अपने अचरजके बीच उस विद्रोहिणी रमणीको अपनी आँखोंसे देखा।

एक मिनटके लिए वहाँ उलझन पैदा हुई, पर जल्दी ही अरुणाने बात सँभाल ली। उनने प्रसन्न मुखसे उसका स्वागत किया, बैठनेकी जगह बताई और उसके साथ बातें करनेमें इस तरह मशगूल हुईं कि मानो वे दिल्लीके अपने घरमें उसे मेहमान बनाकर बुलानेके बादे सुख दुखकी बात कर रही हों। आखिर उलझन भरा वक्त किसी तरह निकल ही गया। उनकी बात खुश मिजाज थी। बातों ही बातोंमें उस अफसरने उठकर पुलिसको इस बातकी खबर देनेके बदले प्रसन्न होकर यह भी कहा कि उसे एक जीवित इतिहासके साथ थोड़ा वक्त बितानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

उनसे सम्बन्ध रखनेवाली वार्ता और सच्ची कहानियोंमें हम सच्ची स्फूर्ति, साहस, और भ्रातृ भाव दिखाई देता है। समय आनेपर ये बात अपने

पाप साबित हो चुकी होगी, जिसे हर कोई जान सकेगा। उनकी ये कहानियां हमारे सामने उस व्यक्तित्वको पेश करती हैं जो रसमय होनेके साथ ही साथ साहसी भी है। निःसंदेह श्रीमती अरुणाकी इन हिम्मतभरी घटनाओंसे आश्चर्य होता है वे यह भूल जाते हैं कि श्रीमती अरुणा एकाएक ही क्रान्तिकारी नहीं बनी। अरुणाको बचपनसे ही हुक्म करनेकी आदत थी। जब उनकी उम्र चौदह वर्षकी थी तब उन्होंने साध्वी (जोगन) बननेका विचार किया था, उस वक्त वे लाहौरकी कान्वेन्टमें पढ़ रही थी। कान्वेंटकी मिस्टर सुपीरियर एक असाधारण स्त्री थीं। जो भी हो कोई उसके सम्पर्कमें आता, उनके अनोखे व्यक्तित्वसे प्रभावित होकर ही रहता था। सिस्टर छोटी सी अरुणा गांगुलीको बहुत चाहती था और उसे जेमस और मेरीकी कहानियाँ बाइबलमेंसे कह सुनाती थीं। उनका कहना था कि दुनिया झगड़े और जंजालोंसे भरी हुई है, इसलिए विशुद्ध और श्रद्धामय जीवनकी श्रेष्ठता आवश्यक था। जब अरुणाने अपना छोटा सा सिर घुमाकर माता पिताके सामने अपना साध्वी बननेका विचार प्रस्तुत किया तो उन्होंने चिढ़कर उन्हें रोमन कैथोलिक सम्प्रदायके विभागसे हटाकर छोटी बहन पूर्णिमाके साथ नैनीतालकी प्रोटेस्टेंट स्कूलमें दाखिल कर दिया। उस वक्त अरुणाने कितना ज्यादा विरोध किया होगा?

उसके बाद कई साल बीत जानेपर अरुणाने पुनः एक बार विद्रोह किया। माँ-बापने रवीके अनुसार इन्हें ब्याह देना चाहा, अरुणाने यह स्वीकार करनेसे इन्कार कर दिया। तब ही यह इच्छा भी यकायक उभर आई कि स्वतन्त्र रह कर और अपने पैरोंपर खड़ा होकर जिन्दगी बितानी चाहिए। कलकत्ते आकर इन्होंने लड़कियोंके गोखले मेमोरियल स्कूलमें शिक्षिका पदपर नौकरी की। इनकी इच्छा सिर्फ गुजर भर कर लेनेकी न थी बल्कि उच्च शिक्षा पानेके लिए इंगलैंड जानेके लिए रुपये बचाना भी था। कितनी अधिक महत्वाकांक्षी थीं वे उस वक्त?

पर इसके लिए कुछ ही समयमें एक अप्रत्याशित लहर पूर्ण वेगमें आने वाली थी। इन्हीं दिनों इनकी छोटी बहन पूर्णिमा इलाहाबादमें ब्याही।

छुट्टीके मौकेपर अरुणा छुट्टियाँ बितानेके लिए अपनी छोटी बहनके साथ इलाहाबाद गई। उस वक्त अरुणाके बहनोई मि० बॅनर्जीके एक मित्र उनसे

प्राय मालित हो चुकी होगी, जिसे हर कोई जान सकेगा। उनकी ये कहानियां हमारे सामने उस व्यक्तित्वको पेश करती हैं जो रसमय होनेके साथ ही साथ साहसी भी है। जिन्हें श्रीमती अरुणाकी इन हिम्मतभरी घटनाओंसे आश्चर्य होता है वे यह भूल जाते हैं कि श्रीमती अरुणा एकाएक ही क्रान्तिकारी नहीं बनी। अरुणाको बचपनसे ही हुक्म करनेकी आदत थी। जब उनकी उम्र चौदह वर्षकी थी तब इन्होंने साध्वी (जोगन) बननेका विचार किया था उस वक्त वे लाहौरकी कान्वेण्टमें पढ़ रही थीं। कन्वेण्टकी मिस्टर सुपीरियर एक असाधारण स्त्री थी। जो भी हो कोई उसके सम्पर्कमें आता, उसके अनोखे व्यक्तित्वसे प्रभावित होकर ही रहता था। सिस्टर छोटी सी अरुणा गांगुलीको बहुत चाहती थी और उसे जेसस और मेरीकी कहानियाँ बाल्यावस्थामें कह सुनाती थी। उसका कहना था कि दुनिया झगड़े और जंजालोंसे भरी हुई है, इसलिए विशुद्ध और श्रद्धामय जीवनकी श्रेष्ठता आवश्यक थी। जब अरुणाने अपना छोटा सा सिर घुमाकर माता पिताके सामने अपना साध्वी बननेका विचार प्रस्तुत किया तो उन्होंने चिढ़कर उन्हें रोमन कैथोलिक सम्प्रदायके विभागसे हटाकर छोटी बहन पूर्णिमाके साथ नैनीतालकी प्रोटेस्टेंट स्कूलमें दाखिल कर दिया। उस वक्त अरुणाने कितना ज्यादा विरोध किया होगा ?

उसके बाद कई साल बीत जानेपर अरुणाने पुन एक बार विद्रोह किया। माँ-बापने रूढ़ीके अनुसार इन्हें ब्याह देना चाहा, अरुणाने यह स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। तब ही यह इच्छा भी यकायक उभर आई कि स्वतन्त्र रह कर और अपने पैरोंपर खड़ी होकर जिन्दगी बितानी चाहिए। कलकत्ते आकर इन्होंने लड़कियोंके गोखले मेमोरियल स्कूलमें शिक्षिका पदपर नौकरीकी। इनकी इच्छा सिर्फ गुजर भर कर लेनेकी न थी बल्कि उच्च शिक्षा पानेके लिए इंगलैंड जानेके लिए रुपये बचाना भी था। कितनी अधिक महत्वाकांक्षी थी वे उस वक्त ?

पर इसके लिए कुछ ही समयमें एक अप्रत्याशित लहर पूर्ण वेगमें आने वाली थी। इन्हीं दिनों इनकी छोटी बहन पूर्णिमा इलाहाबादमें ब्याही।

छुट्टीके मौकेपर अरुणा छुट्टियाँ वितानेके लिए अपनी छोटी बहनके साथ इलाहाबाद गई। उस वक्त अरुणाके बहनोई मि बेनर्जीके एक मित्र उनसे

मिलने आये थे। वे ऑलइण्डिया मुस्लिम लीगमें उपस्थित होनेके लिए कलकत्ता गये थे, वापस होते हुए थोड़े दिन इलाहाबाद भी रुके। कुछ ही वर्ष पहिले, उन्हें असहयोग आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण १॥ सालकी सजा भी हुई थी। वे ख्यातिप्राप्त राष्ट्रसेवी और महत्वाकांक्षी वकील थे। उनकी प्रेक्टिस तेजीसे चल रही थी। वे कवि थे, और बहुतोंको शक था कि वे अपने फुरसतके समयमें कविता करते और पढ़ते रहते थे। उनका नाम था आसफ अली। अरुणाके साथ इनकी मुलाकात पूर्णिमाके मकानपर हुई। दो तेजस्वी प्रतिभाओंने दर्शन किये। वे एक दूसरेसे निकट परिचयमें आये, आपसकी मित्रता दृढ़ हुई और सच्चा रोमान्स शुरू हुआ।

सन् १९३० और १९३२ के असहयोग आन्दोलनके वक्त अरुणाने जेल जीवन बिताया था। १९४०के ए आई सी सी के अधिवेशनके बाद सरकार की आँखोंमें धूल झोंककर भाग निकलीं, और जेल जानेका तोहफा लिए बगैर प्रसिद्ध राष्ट्रसेवियोंकी पंक्तिमें आ गईं।

उनकी पहली जेलयात्रा सरल न था। सन् १९३० में दिल्लीके चीफ कमिश्नर उनके भाषणसे उबल उठे थे यह भाषण सन १८५७ के विद्रोह पर था। ऐसा होनेपर भी सरकारने उनपर राजद्रोहके लिए नहीं बल्कि पिनल-कोडकी १०८ वीं धाराके अनुसार मुकदमा चलाया। भले चाल चलनका वचन देनेसे इन्कार करने पर उन्हें एक सालकी सजा हुई। हमारी सर्व सत्ता धारी नौकरशाहीकी कल्पनाशक्ति कुछ कम है ऐसा कौन कह सकेगा?

कुछ महीनोंके बाद गाँधी इरविन समझौतेके फलस्वरूप सभी राजनैतिक कैदियोंको छोड़ दिया गया पर अरुणा, छूटनेवालोंमें न थीं। सन १९३१ में भी सरकारको उनका छोड़ना भयानक मालूम होता था। किन्तु लाहौर के जनाना-जेलके कर्मचारियोंने आश्चर्यसे देखा कि अगर अरुणाको न छोड़ा गया तो सब स्त्री क़ैदी भी वहाँसे बाहर जानेको इन्कार कर रही थीं। यह जिद सुबह ६ से रातको आठ बजे तक चालू रही। अतमें गाँधीजी और डा अन्सारीने यह हठ छोड़ देनेके लिए तार किया, और श्रीमती अरुणा जेलमें बिना साथियोंके अकेली ही रहीं। फिर भी उस वक्त लोगोंको दिखाने के लिए उन्हें छोड़ दिया गया। उनके जेलके बाहर पैर रखते ही थाँ

अब्दुलगफ्फारखाँ और दूसरे मित्रगण उनका स्नेह स्वागत करनेके लिए तैयार खड़े थे।

दिल्ली डिस्ट्रिक्ट जेलमें उन्हें रखा गया था। वहाँ भी राजनैतिक कैदियों के साथ अनुचित व्यवहारके कारण विरोध शुरू हुआ। श्रीमती अरुणाने भूख हड़ताल प्रारंभ की और अत्यधिक अस्वस्थ होनेपर भी उन्होंने उपवास न छोड़ा। आखिरकार नौकरशाहीको उन राजनैतिक कैदियोंकी माग के आगे झुकना पड़ा। पर नौकरशाहीने अपने ढंगका बदला लिया। उन्हें अम्बाला ले जाया गया, वहाँ स्त्रियोंको जेल न होनेके कारण एकान्तमें रखा गया।

उसके बाद खास जानने लायक बात यह है कि—उसके बाद दस बरस तक उन्होंने राजनैतिक संग्राम विशेष रूपसे रचनात्मक हिस्सा न लिया, सिर्फ अखिल भारतीय स्त्री मण्डलको लेकर ही कार्य प्रवृत्ति की। ये वर्ष पर्याप्त पढ़ने, अभ्यास और मनन करने के ही थे, जिससे वे आगामी संग्रामके लिए तैयार हो सकें। वे बहुत नजदीकसे कांग्रेसकी कमियोंको देख रही थीं। वे भी पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी तरह कई बार कांग्रेसके उच्च सिद्धान्तोंको एक ओर रख देती हैं। वे कहती हैं कि 'हम कांग्रेसके मार्गमें बाधक बनना नहीं चाहते, पर बम्बई और कलकत्तामें घटी हुई ताजी घटनाओंके कारण जब हमारे स्वाभिमानका प्रश्न सामने आता है, तब मैं यही ठीक समझती हूँ कि उस वक्त हम उन उच्च सिद्धान्तोंको उज्ज्वल भविष्यके लिए छोड़ दें।

इस तरह उन्होंने आजादीके लिए अपनी लड़की रीति और पद्धतिसे नये कार्यक्रम तैयार किये। 'भारत छोड़ो' के भीषण दिनोंमें उन्हें अपने कार्यक्रम को आजमानेका मौका मिला, साथ ही साथ उन्हें जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, राममनोहर लोहिया और कई अप्रसिद्ध वलिक शक्तिशाली व्यक्तियोंका साथ भी मिला। अरुणाने सिर्फ उन लोगोंमें उच्च स्थान ही प्राप्त नहीं किया बल्कि उनकी शुभाकांक्षाएं भी उनके साथ थीं। उनकी अदम्य निडरता और साहसमें भारतके इतिहासमें एक अद्भुत अध्याय जोड़ा है। आज तक श्रीमती अरुणा, आसफअलीकी पत्नीके रूपमें पहिचानी जाती थीं, पर अब उनकी कीर्तिमय प्रतिमा देखते हुए संभव है कि भविष्य

में आसफअली श्रीमती अरुणाके पतिके रूपमें पहिचाने जायेंगे।

करीब चार वर्षके अज्ञातवासके बाद जब उन्होंने खुलेआम पैर रखा, उस दिन तीसरे पहर इंडियन एसोसिएटेड प्रेसके एक संवाददाताने उनसे मुलाकात की थी। अपनी छोटी सी बातचीतमें उन्होंने बताया कि 'मेरे कार्योंके प्रशंसाके पुल बाँधना ठीक नहीं है मैंने जो कुछ किया है वह मेरे कर्तव्यका ही एक हिस्सा था। यह सब आजादीके जंगका ही एक रूप था। मैं फिरसे निश्चित रूपमें कहती हूं कि मैं कुछ शहीद नहीं हूँ। यह समय आंतरिक या व्यक्तिगत विषयोंको लेकर बैठनेका नहीं है। इसलिए ऐसी बातों को रहने देना ही ठीक है। इन गये चार वर्षोंमें मुझपर क्या क्या और किस तरह बीता यह मैं अभी नहीं बताऊंगी। मेरे नामका वारंट रद्द हो जानेसे मुझे जरा भी खुशी नहीं है। दयाके टुकड़े फेंककर छुटकारा कर देनेमें न तो बड़प्पन है न बुद्धि ही। ऐसी बातका कुछ अर्थ ही नहीं। पर और इससे ऐसा भी ज्ञात नहीं होता कि सरकारकी नीतिमें कुछ परिवर्तन हुआ होगा। पर हम सरकारसे उदारताकी भी आशा नहीं रखते। हम शांतिपूर्वक बैठ सकेंगे ऐसा हमें विश्वास नहीं है, और हम सरकारको भी शांतिसे नहीं बैठने देंगे।

साथ ही साथ श्रीमती अरुणाने यह भी बताया कि 'जो लोग अभी तक जेलके सीकचोंके पीछे पड़े हुए हैं, या गुप्तरूपसे इधर उधर भटक रहे हैं, हमें उनके लिए बहुत दुःख है। मेरा वारंट रद्द होने से शायद मेरा कार्य कुछ सरल हो जाय। इन गये चार वर्षोंमें भी मैंने अपना काम जारी रखा था और अब अधिक स्वतन्त्रतासे वैसा करना मेरे लिए संभव होगा, मुझमें और मेरे अज्ञातवासी मित्रोंमें इतना ही अन्तर है। दूसरे दृष्टिसे तो मेरा प्रकट होना किसी खाइसे बाहर आने जैसा ही है।

हम यह नहीं जानते कि श्रीमती अरुणा किन तत्वोंकी बनी हुई हैं, फिर भी इनके जेल जीवनके प्रारम्भसे अबतक के इनके जीवनको ध्यान पूर्वक देखनेसे मालूम होता है कि उनमें कोमल और मृदु हृदय होते हुए भी वह वक्त आनेपर पाषाणसे भी अधिक कठोर और उग्र बन सकता है। किसी भी सिद्धान्तने आज तक उन्हें अंधी बनाकर न झुकाया, अपने मनकी आवाज

...नसे दया दोनी दान करती थी, पर इतने जुल्मोंके बावजूद भी वह उसे ...या नहीं सकी है। सरकार अब तक जनताकी शक्तिका परिचय न पा सकी थी। सन् १९४२ में जनताने अपना बलिदान करके ब्रिटिश सेनाकी गोलियों को अपने सीनोंपर झेला। मेरी गत तीन सालके अज्ञातवासकी कहानी आजादीकी कहानी है, मैं उसकी एक प्रतीक हूं। हम ब्रिटेनके साथ समझौता नहीं चाहते। हम सिर्फ असेम्बलियोंमें ही सरकारसे न लड़ेंगे, बाहर भी हमारा स्वातन्त्र्य संग्राम जारी रहेगा। लोग १९४२ की जनक्रान्तिको भूले नहीं हैं, एक दिन ऐसा आयेगा कि हम दिल्लीकी सेक्रेटरिएटपर अपना झंडा फहराएंगे, और अपने हाथोंसे ब्रिटिश नौकरशाहीकी व्यवस्था नेस्त नाबूद कर देंगे। पर हमारे उस रास्तेमें बहुत सी बाधाएं आयेंगी। ब्रिटिश वायसराय और ब्रिटिश सेना हमारे रास्तेकी पहली अड़चनें होंगी। पर हम हिन्दू-मुस्लिमोंको एक होकर मजदूर और किसानोंका राज्य स्थापित करना होगा।'

अन्तमें उन्होंने विद्यार्थियोंसे ब्रिटिश मालके बहिष्कारका आन्दोलन करनेका अनुरोध किया कहा कि बंगालके अकालका जिम्मेदार सदा ब्रिटिश शासनतन्त्र ही है अगर भारतमें ब्रिटिश माल आयेगा तो भारतीय उद्योग और पूंजीकी स्थिति बहुत खराब हो जायगी।'

दिल्लीके बाद वे नागपुर गईं, वहाँ भी जनताने उनका असीम स्वागत किया। नागपुर कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित नागपुरके नागरिकोंकी एक विराट सभामें सभापतिके स्थानसे श्रीमती अरुणाके स्वागतमें श्री दीनदयाल गुप्तने उनके यशस्वी जीवनके वर्णनमें कहा कि 'सन् १९४२की अगस्त क्रान्ति में नागपुरकी जनताने जितना आत्म-बलिदान किया है हम उन्हें अपनी श्रद्धा ञ्जलि अर्पित करते हैं, श्री गुप्तने यह भी कहा कि आनेवाले स्वातन्त्र्य-संग्राममें भी नागपुरकी जनता श्रीमती अरुणाके पद चिन्होंपर ही चलेगी।

'अरुणाकी वाणी, हुंकारकी प्रतिध्वनि है। उनके मानसिक विश्वासका प्रतिबिम्ब उनके निडर दृढ़ और क्रान्तिकारी स्वभावपर भी पड़ा है। यद्यपि अगस्त आन्दोलन, कांग्रेसकी अहिंसा नीतिसे कुछ दूर था फिर भी वह हिंसा

भारत-सरकार द्वारा किये गये जुल्मों और हत्याकाण्डोंकी तरह भीषण और खूनसे सनी हुई न थी। यह भारत-सरकारके शासन व्यवस्थाका एक प्रतिकार मात्र था। फिर भी १८५७ की बगावतकी तरह इस बार किसी खास अवसरका खून नहीं किया गया, और न सरकारके विरुद्ध बम वगैरहका षड्यन्त्र ही रचा गया था। यह प्रतिकार सिर्फ सरकारकी शासन व्यवस्थाके विरुद्ध किया गया था।

जब नागपुर छोड़नेके बाद, वर्धाके नागरिकोंने श्रीमती अरुणाका भव्य स्वागत किया, तब उन्होंने उस विराट जनसमूहको सम्बोधित करके, वायसरायके उस वक्तव्यका उल्लेख किया जिसमें वायसरायने क्रांति और आन्दोलन की आलोचना करके उसे मानसिक हिंसाका रूप दिया था। उन्होंने वायसराय के उस वक्तव्यका योग्य उत्तर देते हुए कहा कि—'वैदेशी सरकारको यह पूछनेका जरा भी अधिकार नहीं है कि हम हिंसाका आश्रय लेते हैं या अहिंसा का, क्योंकि उसके हाथ खूनसे सने हैं। महात्माजी भले ही इस बारेमें अपना खुलासा कर सकते हैं।' उन्होंने कहा कि 'भारत छोड़ो' की आवाज उग्र होती जा रही है। शासनकी बेवकूफी और बदनियतीके कारण अनाजकी कमी से जनताके सामूहिक मरणका प्रश्न सम्मुख खड़ा है। यह अकाल बंगालके अकालसे कई गुना बड़ा होगा। भारत भरमें व्यापक रूपसे अकाल अपना मुँह बाये खड़ा है। पर हमें मौतकी राह नहीं देखना चाहिए। हम किसानोंको सचेत कर देना चाहिए कि वे नौकरशाहीके धोखेमें आकर अपना अनाज न दें बल्कि गाँवोंमें ही अनाजका संग्रह करके पंचायतके द्वारा उसके उपयुक्त और समान रूपसे बँटवारेकी व्यवस्था करें। इस तरह हम भारतको भूखा मार डालनेके लिए कटिबद्ध वेवलके शासनतन्त्रको चुनौती देनी चाहिए। अगर काँग्रेस चाहे तो देशमें वह समान सत्ताके रूपमें खड़ी हो सकती है। राष्ट्रकी ऐसी कठिन परिस्थितिके वक्त ब्रिटिश शासनका साथ देने से हम उसके गठबंधनको और मजबूत बनाएँगे। १९४२ के सनको याद कीजिए। रोटीके लिए किया जानेवाला आन्दोलन, आजादीका आन्दोलन है। अनाजका एक भी कण हम शासकको खिलानेके लिए नहीं देना है, और —

एक पाई ब्रिटिश मालको खरीदनेमें खर्च करनी है। अन्तमें उन्होंने यही कहा कि 'हमारे सामने दो रास्ते खुले हुए हैं—'अकालके कारण मौतके मुँहमें जाना, या ब्रिटिश सरकारके हाथों गुलामीमें सड़ना। ये दो बातें हैं। इन दोनोंमेंसे हमें किसी एकको पसन्द करना है। मैं तो आपको लड़ते लड़ते वीरतापूर्वक मौतसे मिलनेका ही आग्रह करूँगी, दुश्मनके हाथों पतित होनेके लिए नहीं कहूँगी।'

घर्गौकी उस विराट सभामें जब वे भाषण करनेके लिए खड़ी थीं, तब डॉ॰ महोदयने उनके गलेमें मालाएँ डालीं। इस प्रसंगमें उन्होंने कहा कि 'यह मान मुझे नहीं मिला, बल्कि उन स्वातन्त्र्य सैनिकोंको मिला है जो अच्युत पटवर्धनकी तरह अब भी अज्ञातवास बिता रहे हैं, उन जयप्रकाश नारायण और राममनोहर लोहिया जैसे देशभक्तोंको मिल रहा है जो अभी तक जेलोंमें सड़ रहे हैं। इतना ही नहीं, यह सम्मान उन्हें भी मिल रहा है, जो अगस्त क्रांतिमें देशभक्तिके नामपर ब्रिटिश दमनके शिकार हुए थे। जहाँ तक आजादी न मिले, हम शान्तिपूर्वक न बैठेंगे।

जनताको सम्बोधन करके उन्होंने इस बारके अंतिम संघर्षका संकेत करते कहा—सरकारके जुल्म हमारे जोशको रोक नहीं सके। हमारी भीतरी आग इस वक्त जो भी कुछ धीमी है फिर भी समय आनेपर वह फिर दहक उठेगी।

उसके बाद उन्होंने अगस्त क्रांतिके कार्य प्रदेशका विस्तृत विवरण बतलाते हुए कहा,— 'क्या यह कहना सच नहीं है कि अज्ञात स्थानोंसे हम प्रोत्साहन या सहायता न मिली था अगस्त क्रांतिमें भागलपुर, सतारा, संयुक्तप्रान्त वगैरह ने महत्वपूर्ण काम किया है। हम जेलोंमें भरे जानेके बजाय बाहर रहकर आजादीकी मशाल लेकर देशसेवा करना चाहते थे। खूनसे सनी हुई सरकारको यह पूछनेका अधिकार नहीं है कि हिंसक हैं या अहिंसक? यह पूछनेका अधिकार महात्मा गांधीको है। हम लोगोंको वीरोंकी अहिंसाका पाठ सिखाया गया है। यदि हमने अब तक गांधीजीकी अहिंसाको ठीक ठीक समझकर अपनाया होता तो हम अब तक स्वतन्त्र हो गये होते।

हम हिंसक थे या अहिंसक इसका न्याय मैं करानेमें नहीं वल्कि जनता से कराना ज़्यादा पसन्द करती हूँ। हमारे बापूजी जब आगाखाँ महलमें उपवास कर रहे थे, तब भी हम लाचार थे।

आप लोग यह न समझ लें आगामी चुनावोंके बाद स्वराज्य आ जायगा, आप लोगोंको अब भी आनेवाले संघर्षके लिए तैयार रहना चाहिए। कुछ ही समयमें ब्रिटिश सरकार हम लोगोंपर अपना माल लादनेकी कोशिश करेगी, पर उस मालका आप लोगोंको बहिष्कार करना चाहिए। सरकारके इस दूसरे मोर्चेसे हमें इस तरह लड़ना है, कि दिनदिन स्वयं पैरोंमें गिरता हुआ आये। अन्तमें उन्होंने महिलाओंसे भी आज़ादीकी लड़ाईमें कूद पड़नेका सन्देश देते हुए कहा कि आष्टा और चिमूरमें जिस तरह ब्रिटिश या भारतीय सैनिकों अथवा उनके दलालोंने स्त्रियोंका शील अपहरण किया उस तरहकी पुनरावृत्ति न होने देनेके लिए बहनों और भाइयोंको आज़ादीकी रणभूमिमें योद्धाओंका साथ देना चाहिये।

* *

वीरांगना अरुणाके इन सब भाषणोंको पढ़नेके बाद हम यह बात अनुभव हुए बिना नहीं रहती कि, उनका राजनैतिक जीवन सिर्फ महात्मा गांधीके सहवासका फल नहीं है। पहले जिन महिलाओंने हमारे देशके अहिंसक आन्दोलनोंमें भाग लिया था उनमेंसे श्रीमती सरोजनी नायडू, श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित, श्री कमला देवी चट्टोपाध्याय, उनकी पटरानी सहचारिणी स्व सत्यवती देवी आदि अनेक महिलाओंके तरह तरहके प्रेरणाओंके रंगोंसे इनका राजनैतिक जीवन रंगा हुआ है। एक बात कॉन्वेंटमें पढ़ा तम छठर जीसस और मेरीकी कथाएँ सुनकर साध्वी बन जानेके लिए आतुर हो जानेवाली अरुणाको ऐसी किस शक्तिने बदलकर राष्ट्र दीक्षामें दीक्षित किया, यह प्रश्न हमें आश्चर्यमें डाल देता है। साथ ही साथ ऐसा भी मालूम होता है कि मानों स्त्री और पुरुषके सामाजिक और राजनैतिक जीवनके आदर्शमें सब भेद भावोंको मिटानेके लिए यह काफी है।

स्त्री भी पुरुषकेही समान और उतनेही परिमाणमें राष्ट्र अथवा समाजकी निर्मात्री है इसलिए प्रत्येक स्त्रीका यह कर्तव्य हो जाता है कि वह अपने जीवन का एक अंश समाज और राष्ट्रको भी दे। इसका मतलब यह नहीं है कि स्त्री अपनी जिम्मेदारियोंको एक ओर रखकर और विवाहित जीवनके उद्देश्योंको भूल कर यह कार्य करे, ऐसा तो करनाभी समाजके लिए आमक है आने वाले समय को न पहिचान कर वर्तमान समयको नष्ट करना बेकार है। राजनैतिक जीवन बितानेवाली हमारे यहाकी सब महिलायें जैसे श्रीमती सरोजिनी नायडू, विजय लक्ष्मी, कमला देवी आदिके जीवनमें हमें कहींभी घरेलू जवाबदारियाँ या विवाहित जीवनमें किसी तरहकी कमी दिखाई नहीं देती। इतनाही नहीं पूज्य माता कस्तूरबाके सामाजिक और राजनैतिक जीवनमें यह आदर्श अखण्डित रूपसे निभाया गया था, इस में सन्देह नहीं। हमें उनमें पुरुष और प्रकृतिके स्वाभाविक और सुन्दर जीवनकी प्रतिध्वनि सुनाई दी है। जहाँ कहीं भी अपवाद हुए हैं वे पुरुष अथवा प्रकृतिकी अपेक्षा भाग्यके द्वारा ही अधिक बाधित हुए हैं।

गये दो विश्वयुद्धोंमें प्रकृति प्रदत्त, शारीरिक कोमलताके होते हुए भी स्त्रियोंने जो महत्वपूर्ण कार्य किये हैं, वे स्त्रियोंकी राजनैतिक और सामाजिक जीवनकी महत्वपूर्ण जागृतिके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इधर पुरुष जब देश और दुनियाके मैंकेर रास्तेसे गुजर रहा था तो उधर आन्तरिक व्यवस्थाओं व्यवहारके कार्य बहुधा नारियोंने किये और साथ ही कुशलतापूर्वक भी। इन दो विश्वयुद्धोंने स्त्रियोंके सामाजिक और राजनैतिक जीवनपर काफी प्रभाव डाला है, आज उनके जीवनके मूलमें क्रान्ति व्याप्त हो गई है। स्त्रियोंने आज जो शक्ति प्राप्त की है, जितना उत्थान किया है, शान्तिके दिनोंमें शायद उसे पाने के लिये पचासों वर्ष लग जाते। युद्ध जन्य परिस्थितियाँ ही वह कारण है जिसने इतनी बड़ी अवधिको इतना छोटा कर दिया। आज उस बढ़ते हुए वेगको रोकनेका प्रयास करना व्यर्थ ही मालूम होता है।

आज हम देखते हैं कि राष्ट्रीय अथवा निजी जीवनमें, सामाजिक या राजनैतिक दृष्टियोंमें भी स्त्री जागृत है। हमें मालूम होता है अब उनमें परा-

धीनता, विषमता या अन्यायको सहन न करके विद्रोह करनेकी भावना धीरे धीरे जागृत होती जा रही है, और यह सच है। और यह भी प्राय निश्चित ही है कि दिनोंके बीतनेके साथ ही साथ उनकी यह जागृति उतनी ही अधिक वेगवती और व्यापक होगी। इन महायुद्धों और राष्ट्रीय आन्दोलनोंने दुनिया को दिखा दिया है कि जिस तरह स्त्री एक सुगृहिणी और सुमाता बन सकती है उसी तरह राष्ट्रकी एक विशिष्ट शक्ति भी हो सकती है।

आज हमारे समाज द्वारा जो तरह तरहके अपवाद या निषेध नारी जीवनके लिए किये जाते हैं वे बताते हैं कि हममें या हमारे समाजमें परिस्थितियोंको पहचानने क्षमता नहीं है। स्त्रीका विवाहित या अविवाहित होना उसकी सामाजिक या राष्ट्रीय सेवाओंका मापदंड नहीं है। परिस्थितिकी जटिल विषमताओंमें स्त्रियोंने अपनी क्षमताका सुंदर परिचय दिया है। यहाँ प्रश्न तो सिर्फ इच्छाका ही है। यदि स्त्री यह अनुभव करे उसके लिए घर और परिवारके बाद देश और समाजके लिए भी कुछ करना बाकी है, और यह कार्य जब कर्त्तव्यमें गिना जाए तब उसे रोका नहीं जा सकता।

तब हम देखते हैं कि इतनी जागृतियोंके बाद स्त्रियोंके सम्मुख एक व्यापक और विस्तृत राष्ट्र है जिसके लिए उन्हें बहुत कुछ करना है। राष्ट्रीय समस्याओंमें स्त्रियोंको रस लेना चाहिए और समाज अथवा शासनपर भरोसा करके समय गँवानेकी अपेक्षा, स्वयं उनमें क्रियात्मक भाग लेना चाहिए। यदि उनके इन कार्योंमें पुरुष विरोध करें तो ऐसी जगह उनका विरोध करना स्त्रियोंका कर्त्तव्य हो जाता है। यदि विवाहित जीवन ऐसे कार्योंमें बाधा देता है तो वह जीवन पुरुषोंके लिए भी उतना ही बाधक होना चाहिए। अच्छा तो यही होगा कि यदि स्वतन्त्रतापूर्वक इन समस्याओंपर विचार किया जाए तो ऐसी अनेक गलत फहमियाँ दूर होंगी। स्त्री और पुरुष दोनोंके लिए राष्ट्रसेवा समान मूल्य रखती है, राष्ट्रसेवामें दोनोंको वह परितृप्ति मिलती है जो कर्त्तव्य पालनके बाद होती है। यदि अन्य प्राणियोंकी अपेक्षा मनुष्यने अधिक बुद्धि पाई है तो उसका दुरुपयोग करना मूर्खता पूर्ण ही है। विलास भी मानव-जीवनकी एक विशिष्ट वस्तु है पर उसे कर्त्तव्यके लिए सब कुछ मान लेना विनाशका कारण होता है।

सबसे बड़ी बात इस विषयमें जानने योग्य यह है कि राष्ट्रसेवी दम्पतिमें सहनशीलताके साथ एक दूसरेको सम्पूर्ण रूपसे समझनेकी क्षमता होनी चाहिए। श्रीमती अरुणाके लिए इस सिद्धान्तको व्यक्तिगत दायरेमें ले जाने पर जहाँ तक हम जान सकते हैं, हमें यह असम्भव नहीं मालूम होता कि अरुणा और आसफअलीमें उपर्युक्त सामञ्जस्य होगा ही। हमें तो उनके जीवन प्रसंगोंसे यह मालूम होता है कि प्रथम परिचयमें ही उनके उद्देश्य और भावनाओंके तन्तु एक दूसरेसे बढ़कर मिल गये होंगे, क्योंकि इस दम्पतिका जीवन एक ही उद्देश्यकी सिद्धिके लिए ढलसरूप है, और प्रत्येक साँसमें उनकी वे भावनाएं एक दूसरेका साथ देती हैं, वह भावना है—भारतकी स्वतन्त्रताकी। एक ओर श्री आसफअली केन्द्रीय असेम्बलीमें, काँग्रेसके नेतृत्वमें उसकी आवाज बुलन्द करते हैं तो दूसरी ओर श्रीमती अरुणा विराट सभाओंके मंच पर उसकी घोषणा करती हैं। भले ही उनकी विचार धाराएँ समाजवादके अनुकूल हों किन्तु उनका मन गाँधीजीके सिद्धान्तों और रचनात्मक कार्योंके लिए अधिक आस्था रखता है। इसीलिए कुछ दिन पहले जब वे वर्धामें गाँधीजीसे मिली थीं गद्गद हो गई थीं।

× × ×

श्रीमती अरुणाके लिए इण्डोनेशियनोंका प्रश्न जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही महत्त्वपूर्ण कुमारनों, विद्यार्थियों, मिल मजदूरों और स्त्री कार्यकर्त्ताओंका का है। इसीलिए उन्होंने बम्बईमें इण्डोनेशियन रिपब्लिकके दिन चौपाटीपर बम्बईके हजारों स्त्री पुरुषोंके समक्ष बुलन्द आवाजमें कहा था कि—'बम्बईके नागरिकोंकी यह सभा, इण्डोनेशियाकी आजाद जनताका अभिनन्दन करती है, और उस संघर्षमें अपना सहयोग देती है जो वे साम्राज्यवादियोंके साथ अपने लिए ही नहीं बल्कि समस्त एशियावासियोंके लिए कर रहे हैं। यह सभा इण्डोनेशियाके लिए काममें लाई जानेवाली भारतीय फौजोंका घोर विरोध करती है, और विदेशी सरकारको चेतावनी देती है कि अब हमारे इण्डोनेशियन भाई-बहनोंके विरुद्ध भारतीय फौजोंका उपयोग भारतवासी सहन न करेंगे। यह सभा प्रस्ताव करती है कि इण्डोनेशियामेंसे, जिसने भारतकी जनताकी

सम्मतिसे अपनेको स्वतन्त्र घोषित किया है, और अपना राष्ट्र स्थापित किया है, जल्द ही भारतीय और विदेशी सेनाओंको हटा लिया जाय। अब एशिया वासियोंने अपनी स्वतन्त्रताके लिए अन्तिम निर्णय कर लिया है। हम अब अंग्रेजोंसे भीख नहीं माँग सकते। आज इण्डोनेशिया आजाद है और साम्राज्यवादी अब इस बातको अच्छी तरह समझ लें कि ईरान, अफ्रीका या एशिया कहीं भी उनका राज्य अब अधिक दिनों तक नहीं टिक सकता।

मित्रराष्ट्रोंने लोकतन्त्र और बन्धुत्वकी बात करके हमारे भारतीय भाइयों को ज्यादासे ज्यादा संख्यामें सेनामें भरती किया था। अमेरिकाने कहा था कि अब काले गोरेमें भेदभाव न रहेगा। पर अब एटम बमके जोरसे विजय पाने के बाद वे लोकतन्त्र और बन्धुत्वकी बातें भुला दी गई हैं। जब जापानी लोग जावा इन्डोनेशिया और बर्मामें सामना करनेके लिए आये थे, तब ये बहादुर राष्ट्र पूछ दबाकर भाग खड़े हुए थे। डच अंगरेज और फ्रेंच अपने साम्राज्योंको छोड़ यूरपमें दौड़ गये थे। पर पुनः जीत जानेपर जिनके बलपर युद्धमें जाते थे जिन देशोंको छोड़कर भाग खड़े हुए थे उन्हीं पर फिरसे हुकूमत जारी करदी और ब्रिटेनने अपने डच और फ्रेंच साथियोंको इसमें सहायता दी।

अब इन्डोनेशिया निवासियोंने तो डॉ॰ सोकार्नोके नेतृत्वमें अपना प्रजातन्त्र स्थापित कर दिया है। हम चाहते हैं कि भारतमें भी ऐसे सोकार्नो उत्पन्न हों जिससे अंग्रेजोंको यहाँसे ऐसे भागना पड़े कि फिर कभी उनका पैर भी भारतकी भूमि पर न पड़े। ब्रिटिश, रशिया और अमेरिकाने युद्धके बाद अपने उन सब वायदोंको जो युद्धके दरमियान दिए गये थे, अपने आप तोड़ा है। उनके सब चार्टर और परिषद उनके अपने स्वार्थमें परिवर्तित हो चुके हैं पर अब एशिया वासी उनके धोखे और षड्यन्त्रोंसे सचेत हो चुके हैं। साम्राज्यवादी शक्तियां अब एशियाई देशोंपर शासन नहीं कर सकती।

श्रीमती अरुणाके बम्बईके सब भाषण चिरस्मरणीय हैं। बम्बईकी महिलाओंको उन्होंने जो प्रभावशाली सन्देश दिया था वह अब भी उनके लिए उतना ही ताजा और चिरस्थाई है। उस सन्देशमें जो जागृति और वेग है वह अपूर्व है। बम्बईके गुजराती स्त्री मण्डलके हॉलमें स्त्रियोंकी एक

महती सभामें उन्होंने बहनोंसे कहा था कि—'आप लोग अपने दिमागमें यह भ्रम न रखें कि हम अबला हैं। आपको आष्टी और चिमूर काण्डोंका बदला लेना है। हमें श्री० सुभाषबोसकी 'झांसीकी रानी'की पल्टनकी तरह भारत में भी एक स्त्री पल्टन स्थापित करनी चाहिए। आपमेंसे प्रत्येक स्त्री इस पल्टन की सैनिक होगी। हमारी उस झांसीकी रानी पल्टनके सैनिकोंका हथियार तलवार न हो कर चरखा होगा। चरखेकी गूँज गाँव गाँवमें ले जाकर हम आजादीके सन्देशको जनतामें फैलाएँगी।

इसी प्रसंगमें श्रीमती अरुणाने महिला परिषदके साथ अपने सम्बन्धकी व्याख्या करते हुए कहा कि 'मुझे आश्चर्य होता है कि इस सभामें महिला-परिषदने भाग क्यों न लिया ?'—स्त्री जागृतिके बारेमें उन्होंने साथ ही साथ कहा कि 'गाँधीजीने १९२५ के नमक सत्याग्रहके बाद स्त्रियोंमें अजीब जागृति फैलाई है। १९३५ से १९४२ तक स्त्रियोंने राजनैतिक जीवनमें महत्वपूर्ण हिस्सा लिया है। इस अर्सेमें भारतकी नारी शक्तिने प्रतिकारकी अमर भावना को सुंदर प्रश्रय दिया है। उन बहनोंने अज्ञातवासी कार्यकर्ताओं को आश्रय दिया था। और सताराके ग्रामा की बहनोंने तो वीरताका एक नया इतिहास ही रचा है।

४२ के आन्दोलनमें हमारी बहनोंने लाठी और गोलियोंका भी बहादुरी से मुकाबला किया था। हम फिर एक बार संघर्षकी तैयारी कर रहे हैं बहन इस बार भी पीछे न रह जायँ इसका ध्यान रहे। ४२ की क्रांतिके समय आष्टी और चिमूरकी बहनोंपर ब्रिटिश फौज द्वारा जो अत्याचार किया था, वह भुलाया नहीं जा सकता, हम उस वक्त उन बहनोंकी मदद करनेमें असमर्थ थे।

इन बहनोंने अपने शील भंग और मान भंगके दुष्ट कलंकको जीवन भर ढोना असंभव समझ, आत्म-हत्या करनेका निश्चय किया था। तब मैंने उन्हें लिखा था कि—'अगर तुम सब अपवित्रकी गिनतीमें गिनी जाती हो भारतकी प्रत्येक स्त्री अपवित्र है। तुम तो देवी हो, तुम्हें आत्म हत्या करना शोभा नहीं देता। लेकिन इन बहनोंपर किये गये अत्याचारोंका बदला लेनेके लिए भारतकी सम्पूर्ण नारी शक्ति तैयार रहे, क्योंकि अब हमें सही मानोंमें क्रांति की तैयारी करनी है। तुम्हें अपने सामने यूरोपकी महिलाओंका उदाहरण

रखना चाहिए कि वे किस तरह रणभूमिमें रणचंडीकी तरह लडी थीं। 'झांसी की रानी' दस्तेने भी वैसा ही पराक्रम दिखाया था तुम भी उन्हींकी वंशज हो।

तुम यह भी न समझना चाहिए कि यूरोपकी स्त्रियोंको बहुत स्वतन्त्रता प्राप्त है, भले ही वे सामाजिक दृष्टिसे हमसे अधिक स्वतन्त्र हों, किंतु राजनैतिक स्वतन्त्रता तो यूरोप क्या, अमेरिकाकी महिलाओंको अभीभी तक न मिल सकी है। यह समय कॉंग्रेसी महिलाओंके लिए खरी कसौटीका समय है उन्हें समस्त प्राप्य साधनोंको लेकर कॉंग्रेसको मजबूत बनाना है, और कॉंग्रेसके नेतृत्वमें ही नये युद्धका श्रीगणेश करना है।

अन्तमें अरुणाने भारतकी स्वतन्त्रता या परतन्त्रताका आखिरी फैसला कर देनेके लिए नये संघर्षका क्रान्तिकारी संदेश सुनाया और इसके साथ ही, इस संघर्षके लिए स्त्रियोंका एक मजबूत संगठन बनानेकी घोषणा की उस घोषणाके मूलमें स्त्रियोंके लिए खास संदेश यह था कि—उस संगठनमें सम्मिलित होकर बहन तलवारकी जगह चर्खेको अपनाएँ और गाँव गाँवमें आजादीका संदेश सुनाएँ।

बम्बईमें श्रीमती अरुणाका भव्य स्वागत किया गया था, उनके बम्बई निवासके अवसरमें उन्होंने जगह जगह अनेक भाषण किये उनके बहुतसे भाषण इस पुस्तकमें संग्रहीत किये गये हैं, और कुछ, जो बहुत ही थोड़े हैं, हमें मिल न सकनेके कारण यहाँ प्रस्तुत नहीं कर सके। प्रत्येक सभामें मानवमेदिनी उनके दर्शनोंके लिए उमड़ी पड़ती थी जगह जगह उन्हें पुष्प मालाओंसे लाद दिया जाता था। सचमुच ही वे इस नूतनयुगकी नारीशक्तिकी मूर्तिमान प्रतीक हैं।

बंबई स्थित दादरके शिवाजीपार्कमें गुमास्ता मंडल और बंबई प्रांतीय विद्यार्थी कॉंग्रेस द्वारा आयोजित सभामें अरुणाने अपनी पर्यवन् रखवोषके स्वरमें कहा—'वार्तालाप और समझौतेके जरिये आजादी नहीं पाई जाती। हम १९४२ के संघर्ष और 'भारत छोड़ो' के लिए किये जानेवाले अंग्रेजोंके दाम्भिक मुकाबलों और अत्याचारोंको नहीं भूल सकते। वार्तालाप, पत्रव्य

और दृढ़ताका आधार लेकर आगामी आन्दोलनकी गर्मा तैयारी करनी है। यह जमाना उपदेश या भाषण देनेका नहीं है। काम करो और साथ ही साथ आगेकी तैयारी भी।

आप सब लोग पुष्पहारोंसे मेरा स्वागत कर रहे हैं, सचमुच मेरा न होकर १९४२ के उन वीरोंका स्वागत है जिन्होंने देशके लिए अपना सब कुछ समर्पित कर दिया। इसी शिवाजीपार्कमें १९४२ की नवीं अगस्तकी सभा को स्व० कस्तूरबा इस कार्यको शुरू करनेवाली थीं। किंतु उनकी गिरफ्तारीके बाद भी दादरकी जनताने ब्रिटिश हुकूमतका बहादुरीसे मुकाबला किया था, यह बात भूली नहीं जा सकती। पुष्पहारोंका यह ढेर मुझ जैसी अकिंचन अरुणाके लिए नहीं बल्कि स्व० कस्तूरबा और ४२ के शहीदोंके लिए है। मैं तो उनकी मात्र एक प्रतीक हूँ।

भले ही ४२ का हमारा आन्दोलन सफल न हुआ हो किंतु जब ब्रिटेन ने भारतीय जनताका जीवन रौंद डालनेका निश्चय किया तब भारतके क्रांतिकारी कार्यकर्ताओंने कॉंग्रेसके अदने सिपाहियोंकी तरह अज्ञातवासी बनकर ब्रिटिश सत्ताके मुकाबलेमें सिर उठाया, और सिरको उसी तरह ऊँचा रखनेके लिए निर्णय कर लिया। ४२ के क्रांतिकारी आन्दोलनकी कमेटीने कितने ही बहादुर, अडिग क्रांतिकारी नवयुवकोंको खरे सोनेकी तरह भारतकी स्वतन्त्रताके लिए प्रस्तुत किया है आज उनके नामका जय नाद होना चाहिए। उन्हींमें से अनेक नवयुवक आज भी जेलके सीखचोंके भीतर पड़े हैं।

भारतको किसी भी देशकी मददकी आशा नहीं करनी चाहिए। ब्रिटेन की समाजवादी सरकार अथवा अमेरिका या चीन हमारी मदद नहीं कर सकते, हमें अपने पैरोंपर खड़े होकर मुकाबला करना चाहिए।

बंगाल, आसाम, संयुक्तप्रांत, आंध्र, महाराष्ट्र और दूसरे प्रमुख प्रांतोंकी तरह बम्बईने भी ४२ के आन्दोलनमें प्रमुख हिस्सा लिया था। १४ जनवरी ४६ की चौपाटीकी सभामें अरुणाने इस प्रांतको भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की, सभापति श्री नगीनदास टी मास्टर थे। उन्होंने बबईके उस विराट जन-समूहका उपयुक्त स्वागत करते हुए कहा कि—'आज मैं यही सोच रही हूँ कि

आपसे क्या कहूँ, और क्या न कहूँ। मैं गत तीन वर्ष तक चुप रही हूँ। ४२ के बादका जमाना भाषण करनेका नहीं था। उस वक्त ब्रिटिश हुकूमतका मुकाबला करना सचमुच कठिन हो पड़ा था उस वक्त काँग्रेसने ब्रिटिश हुकूमत के लिए *'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया था।* बम्बईकी इस महानगरीमें बहुतसे नेता आते हैं और भाषण करते हैं। मैं तो जो कुछ कहूँगी एक अपने सिपाहीकी तरह कहूँगी।

इस समय देश-हिमालय में चारों तरफ 'जय हिन्द' की पुकार सुन रही हूँ। सबकी आँखोंमें मैं विजयका तेज देख रही हूँ। तब मेरी आँखोंमें आँसू आ जाते हैं जब मैं पूछती हूँ कि विजयके चिन्ह हैं कहाँ? मुझे इसका जवाब नहीं मिलता।

फिर भी आप लोग इस विशिष्ट प्रसन्नता और विजयकी रोशनीसे मेरा स्वागत कर रहे हैं यह मेरा स्वागत नहीं है मैं हर बार कहती हूँ कि आप सन् ४२ के उन शहीदोंका स्वागत कर रहे हैं जिन्होंने देशके लिए अपना बलिदान किया है।

भारतकी जनताने अंग्रेजी हुकूमतको यह बता दिया है कि हमारी जीभ पर ताले लगा दो, भले ही हमें सींखचोंमें बन्द कर दो पर अब वे जाग्रत भारतकी बढ़ती हुई शक्तिको नहीं रोक सकते एक की जगह हजारों क्रान्तिकारियोंकी टोली मैदानमें आएँगी।

बम्बई, राष्ट्रीय क्रान्तिकारियोंका प्रमुख दुर्ग है कई तरहकी धमकियाँ, जुल्मों, अनाचारोंके डरके बावजूद भी बम्बई नगरीने क्रान्तिकारियोंको आश्रय दिया है, इसलिए मैं उनकी ओरसे बम्बईके नागरिकोंको धन्यवाद देती हूँ। ये क्रान्तिकारीगण बरसों इकट्ठे होकर स्वेच्छापूर्वक यहां घूमते फिरते थे। यहाँके अनेक अपरिचित नागरिकोंने हम लोगोंके साहस और शक्तिको बढ़ाया था। आजकी ये पुष्पमालाएँ मेरे लिए न होकर उन अनजानोंके लिए हैं जिन्होंने आधी आधी रातको सिर्फ शब्द कहने भरसे, निस्संकोच रूपसे हमारे लिए अपने दरवाजे खोल दिये थे। ४२ के अगस्त आन्दोलनके दिनोंमें आजादहिंद रेडियो एक साधारण वस्तु थी, फिर भी वह रेडियो सिर्फ रेडियो न होकर एक मोर्चा था। उस रेडियोके संचालक डॉ. राममनोहर

लोहिया अभी तक जेलमें है, उनपर बहुतसे जुल्म किये गये हैं। उनके पिता के गुजर जानेपर भी उन्हें अभी तक जेलमें रखा गया है। बम्बईके आजाद हिंद रेडियो स्टेशनपर काम करनेवाली बहादुर बहन उषा मेहता अब तक बीमारीकी हालतमें अकेली जेलमें पड़ी हैं। एकाएक पुलिस धावा करेगी यह बात मालूम हो जानेपर भी, उषा बहन अपने निश्चयसे न डिगी। इसी सिलसिलेमें श्रीमती अरुणाने यह बताया कि गुप्त कार्यकर्ता कायर नहीं होते, उन्होंने जनताको भरौचके कार्यकर्ता श्री० छोटूभाई पुराणी, स्व० कोतवाल वगैरहकी याद दिलायी। जब ९ वीं अगस्तको नेताओंकी गिरफतारी हुई तब मुझे चारों ओर पिस्तोल, लाठी और टीयर गैससे लैस अंग्रेजी हुकूमत ही दिखाई दी। उस वक्त कांग्रेसने 'भारत छोड़ो' की पुकार की थी। गांधीजीने 'करो या मरो' का सूत्र हमें दिया था। ऐसे अवसरपर जिसको जैसा लगा वैसा उसने किया। उस वक्त सबोंने भेदभाव भूलकर सिर्फ देशकी आजादीको पा लेनेका ही निर्णय किया था। हमने यह भी सुना था कि यदि इस बार जनता साथ न देगी तो गांधीजी आमरण अनशन करेंगे। गांधीजीको बचाने के लिए हमने 'भारत छोड़ो' के निर्णयको अमलमें लानेकी ठान ली, हम इस बारेमें कॉंग्रेस और गांधीजीको जिम्मेदार नहीं मानते।

इसके बाद उन्होंने बंगालके अकालका उल्लेख करते हुए कहा कि 'कोई भारतीय या बंगाली बंगालके अकालको सरलतासे न भूल सकेगा। अगर फिर भी वैसी ही परिस्थिति उत्पन्न हुई तो हम लड़ते लड़ते मर जायेंगे। भोजन छीनकर भूखसे मरते हुओंम बाँट देंगे जीवनमें एक बार तो मौत आयगी ही ,

अन्तमें उन्होंने नेताओं और जनताको बताया कि वह ब्रिटिश सरकारके वचनोंमें विश्वास न करके अपनी आजादीकी लड़ाईको जारी रखें। 'आजादी, व्यारा सभाओंसे नहीं बल्कि मजदूर और किसानोंके संगठनसे आएगी' यह कहकर उन्होंने ब्रिटिश मालकेसंपूर्ण बहिष्कारका जनतासे अनुरोध किया था।

पहले भी, यह उल्लेख कर दिया गया है कि अरुणाकी विचारधारा और नीति समाजवादके ढाँचेमें ढली हुई है। वे पूँजीपतियोंकी निन्दा क्यों करती हैं इसका सबब उन्होंने इस भाषणमें स्पष्ट कर दिया है। इस

भाषणमें जरा भी मानसिक द्वेष न होकर स्पष्ट वक्तव्य ही है, और उस वक्तव्यके पीछे हम उनके निर्दोष हृदयको देख सकते हैं। ४६ की १८ जनवरी शुक्रवार की सांझको नई दिल्लीकी जनताके हर्षातिरेक और स्वागतके बीच उन्होंने कहा—

'आप लोग जो सम्मान इन पुष्पमालाओंके साथ मुझे अर्पित कर रहे हैं वह मुझ अकिंचनके योग्य नहीं है, किन्तु एक महान पुरुषकी पत्नीके रूपमें जेलमें जाकर देशके लिए अपना बलिदान देनेवालीके लिए है। मेरा सत्कार किसलिए हो? सचमुच तो इस स्वागतके अधिकारी हमारे अज्ञातवासको सफल बनानेवाले लोग हैं, और प्रशंसाके पात्र भी, हम न होकर वे ही हैं।'

अगस्त आन्दोलनकी गुप्त कार्यवाहियोंका वर्णन करते हुए, इसी सिलसिलेमें श्री० अरुणाने कहा कि 'हमारे पास ऐसे भी कार्यकर्त्ता थे जिन्होंने आस्मानके तारोंके नीचे कई रातें गुजारी थीं। वे ही सैनिक हमारे हाथ पैर थे। वे क्रांतिकारी विद्यार्थी और नवयुवकगण पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिए गये, और उसके बाद पुलिसने उनपर अनेक अत्याचार किये यह सब सहन करने पर भी उन्होंने अज्ञातवासी कार्यकर्त्ताओंके नाम और स्थान नहीं बताये। क्रूरतम अत्याचारोंके सहन करनेपर भी वे नवयुवक खामोश रहे, एक शब्द भी उनके मुँहसे न निकला। उन्होंने नौकरशाहीके हाथमें ऐसी एक भी कड़ी न सौंपी जिससे हमारा संगठन टूट सके। उन नवयुवकोंमें प्रसिद्धि या या गुणगानकी चाह न थी। अभी भी उनमेंसे अनेक युवक जेलमें हैं, और इस प्रतीक्षामें हैं कि आजाद भारतकी जनताके द्वारा वे कब मुक्त होंगे।

शायद नेतागण हमसे पूछेंगे कि इस ढंगकी भयंकर ज्वाला तुमने क्यों फैलाई? हमारा उत्तर यही होगा कि बापूजीके उपवासके मनहूस वातावरण ने हमको आशंकित और पीड़ित किया और हमें यही मार्ग लेना पड़ा, हमने बापूको जेलमें डालनेवाली ब्रिटिश हुकूमतके विरुद्ध क्रांति की थी।

श्रीमती अरुणाने भारतीय जनताकी उस आशाकी ओर भी संकेत किया जब वह अमेरिकाकी ओर सहायताकी दृष्टिसे देखती है। उन्होंने कहा—'जब गाँधीजी उपवास कर रहे थे तब जनताके द्वारा अमेरिकन प्रतिनिधि फिलिप्स से मध्यस्थता करनेकी विनती की गई थी, तब उस ओरसे नकद जवाब मिल

गया था कि—'यह तो ब्रिटेन और भारतकी बात है, हम इसके बीच में नहीं पड़ सकते'।

मुझसे कई बार पूछा जाता है कि तुम १९४२ के पहले तो समाजवादी न थीं, अब कैसे बन गई? तुम पूंजीपतियोंकी निन्दा क्यों करती हो? इन सब बातोंके कारण भी उपर्युक्त हैं। बापूजी के उपवासके वक्त मैंने कई धनवानों को अपने हाथोंसे पत्र लिखे थे कि 'कृपया लिनलिथगोसे मिलिए' 'बापूजीकी जिन्दगी बचाइए'। उन लोगोंका जवाब मिला 'हमारे हाथ बंधे हैं' 'हम लाचार हैं', आपकी मदद नहीं कर सकते'—आज वे ही पूँजीपति ब्रिटेनके उद्योग पतियोंके साथ मिलकर, और करारनामा करके भारतमें ब्रिटिश माल मँगानेकी व्यवस्था कर रहे हैं, ब्रिटिश मालपर भारतकी छाप लगाकर बेच रहे हैं! उनके प्रति मेरी घृणाका यही कारण है।

आज हमें सिर्फ संघर्षकी बात करना है, हम समझौताको नहीं मानते एटली या उनकी मजदूर सरकारको पहचानते हैं। हमारी सबसे ज्यादा पहचान तो बम्बईकी पुलिस है। आज भाषण या ठहराव करनेका जमाना नहीं जरूरत है काम करने की, लड़ाईके लिए तयारी करने की। आज मैं आपके सामने भाषण कर रही हूँ, कौन जानता है कल या उसके बाद बरसों तक मैं आपके सामने आ भी न सकूँ। गांधीजीने ही हम लोगोंको असहयोगका मंत्र दिया है, और आजादीका मार्ग भी यही है, हिंसा या अहिंसा उसके साधन मात्र हैं। असहयोग स्वतंत्रताका एक महत्वपूर्ण उपाय है। गांधीजीके असहयोग मंत्र देनेके बाद आज चालीस करोड़की आँखोंमें एक नई ज्योति दिखाई देता है। आज हमारे सम्मुख सिर्फ गांधीजीके उस असहयोगको अपने आप में समा लेनेका प्रश्न है।

कांग्रेसके मंत्रिमंडल क्या करेंगे? क्या असेम्बलियोंमें जाकर वे कॉंग्रेसी मंत्रिगण नौकरशाहीको नेस्तनाबूद कर सकेंगे? गोली चलाकर हजारों निर्दोषों की जान लेनेवाली पुलिस को क्या वे दूर कर सकेंगे? मैं जानती हूँ कि, ४२ के पहिले भी कांग्रेसी मंत्रिमंडल थे। पर १९४२ के कांग्रेस प्रस्तावके बाद नौकरशाही ने जोर पकड़ा और उसने इन मंत्रियों को ही गिरफ्तार किया

इसीलिए हमारा कहना है कि धारासभाएँ आजादी लानेमें असमर्थ हैं। हम जानते हैं कि यह कार्य कठिन है पर ४२ की जनक्रांतिको देखते हुए हमारा विश्वास है कि यह महान कार्य भी होकर रहेगा। जैसे पानीको रोक कर बिजली पैदा की जाती है उसी तरह भारतकी जनशक्तिको किसी ऐसे मार्गकी ओर ले जाना चाहिए कि जिससे समय आनेपर वह रचनात्मक कार्योंकी ओर प्रवृत्त हो।

फिर एक बार गुरुवार ता० १८ की शामको, चौपाटीकी रेतीपर अरुणाका भाषण सुननेको इच्छुक विशाल जनसमूहको उन्होंने बताया कि ब्रिटिश सरकार द्वारा किये जानेवाले वादे झूठ और भ्रमात्मक हैं। फिर एक बार इस सभामें उन्होंने ब्रिटिश मालके बहिष्कारकी भावनाके अनुरूप भाषण किया उन्होंने कहा—'यह बहुत बड़ी गलती हम लोग कर रहे हैं, यह सोचकर कि भारत की आजादी जल्द से जल्द आ रही है मैं फिर कहती हूँ कि असेम्बलियोंके जरिये आजादी नहीं आ सकती और न ब्रिटिश सरकार उसे दे ही सकती है। इस तरह हमें मालूम होना चाहिए कि आजादी की जगह गुलामी आ रही है ब्रिटिश सरकार लालच देकर भारतको अपने जालमें फांस रही है। यही मार्ग सर्वोत्तम है। क्रांतिके लिए तैयार हो जाओ जबसे मैं अज्ञातवास छोड़कर बाहर आई हूँ तब ही से जनतासे कह रही हूँ कि नई लड़ाईके लिए कमर कस लो और उस संघर्षका प्रारम्भ, ब्रिटिश मालके सम्पूर्ण बहिष्कारसे करो।

उसके बाद उन्होंने अगस्तकी जनक्रांतिके वीरोंकी रहस्यमयी कहानियों का संकेत करके उन्हें प्रशंसा युक्त श्रद्धांजलि अर्पित की। गद्गद्कंठ से भाषण जारी रखते हुए वे कहती गईं— आज मैं आपके सामने खड़ी हूँ। मैं परेशान हूँ, मुझे यह समझमें नहीं आ रहा है कि क्या कहूँ और क्या न कहूँ। मैं अपनी कहानी आप लोगोंसे कहना चाहती हूँ। आज तक कांग्रेसके सैनिकों का काम सभा करना और जुलूस निकालने का था। पर अब '४२ के आन्दोलन के बाद यह मार्ग बदल गया है, मैं एक सैनिककी तरह ही अपनी कहानी कहूँगी। साथ ही साथ उनकी भी जिन्होंने अज्ञातरूपसे १९४२ के अगस्त आन्दोलनमें भाग लिया था। वर्षोंसे ब्रिटिश सल्तनतने कुचल कुचल कर

उन्हें इतना मजबूत बना दिया है कि उन्होंने आखिरकार उस विदेशी हुकूमत से विद्रोह किया, और किसी भी हालतमें अपना सिर नहीं झुकाया। बम्बई ने इन क्रान्तिकारियोंको आश्रय दिया था, उन लोगों के लिए बम्बई के हजारों द्वार खुल गये, बम्बई की जनता निडर बन गई थी, और इस निर्भयता के कारण वह धन्यवाद की पात्र है।

समाचार पत्र अगस्त आन्दोलन की बहुत सी बातें लाचार होकर प्रकाशित न कर सके थे। जिन्होंने बम्बई में आजाद रेडियो का संचालन किया वे राममनोहर लोहिया भी आज हमारे बीच नहीं हैं, उनपर लाहौर के किले में सरकार द्वारा असह्य अत्याचार किये गये हैं।

इस महान कार्यके लिए हम साहसी बालिका उषा मेहताको भी नहीं भूल सकते, आज वे यरवदा जेलमें अपने दिन गुजार रही हैं (बम्बईके कॉंग्रेस मन्त्रिमंडलकी स्थापनाके साथ ही वे ता. ३ अप्रैल १९४६ को छोड़ दी गई हैं) गुजरातके वृद्ध श्री छोटुभाई पुराणीने भी उस वक्त वह जोश दिखाया था जो युवकोंको भी मात कर दे। जनतासे मेरी यही विनती है कि जब वह नेताओं के जयनाद करे तब इन लोगोंको न भूले। और हो सके तो 'उषा मेहता की जय' और 'लोहियाकी जय' भी कहे। इस तरह उन्होंने जो जो कठिनाइयाँ झेली हैं उसे आप याद तो कर सकेंगे।

'आप शायद यह पूछेंगे कि हम लोगोंने किसकी स्वीकृतिसे जेलोंके बाहर रहकर सेनाका निर्णय किया था? हमारे नेताओंको जेलोंमें ठूँसा गया, हमारे चारों ओर, हमारे देश बन्धुओंपर अंग्रेजोंके द्वारा लाठी, अश्रुगेस और गोलियोंका प्रयोग किया गया। तब हमने यह दृढ निश्चय किया कि 'चालीस करोड़ हरगिज नहीं दबेंगे!' आप फिर कहेंगे कि आखिर किसकी मंजूरीसे आपने यह निर्णय किया? तब हम कहेंगे कि हमारा यह निर्णय आठवीं अगस्तके प्रस्तावकी स्वीकृतिके अनुरूप था। उस प्रस्तावका आदेश था— प्रत्येक मनुष्य स्वतन्त्र होकर रहे समय आनेपर उसे जो सूझे वह करे।

उस वक्त गांधीजीका यही आदेश था कि 'करेंगे या मरेंगे।'

हमारे सामने ये ही दो आदर्श मार्ग प्रदर्शक थे, जिनकी स्वीकृतिसे, हमें जो कुछ ठीक लगा, किया। हमने हमारी किश्ती क्रांतिकी आँधीमें बेधड़क

होकर छोड़ दी हमारी यह मस्र किसी भी पक्षविशेषके लिए न थी वह सफ़र थी सिर्फ भारतकी स्वतंत्रताके लिए। तूफानमें हमारी किश्ती डोल रही थी, यह किसीको मालूम न था कि वह पार उतरेगी या टूट जाएगी। अगर फिर भी उसकी जरूरत हुई तो हम कल ही उस सफरके लिए तैयार हैं! हमें यही डर था कि यदि जनता शांत होकर बैठी रहेगी तो गांधीजीको दुःख होगा और वे फिर उपवास करेंगे। इसलिए हमने प्रबल प्रतिकार करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया। हमारा उद्देश्य किसी भी ढंगसे स्वतंत्रताके आन्दोलनको आगे बढ़ाना था।

कॉंग्रेसके अगस्त प्रस्तावने जनतामें जागृति उत्पन्न की। जनताने स्वतंत्रताके मदसे उन्मत्त होकर जो कुछ किया अगर समय बदल जानेपर वह अपने उस कार्यके लिए पछताए तो यह उसके लिए शोभास्पद नहीं यह कायरता है! हाँ, कॉंग्रेस यह कह सकती है कि जो कुछ हुआ वह अहिंसाके विरुद्ध थी, यह हम मानते हैं और इसके उत्तरमें हम यही कहेंगे कि यह हमारा दोष था।

तब वीरांगनाने बंगालके भीषण अकालकी याद दिलाते हुए जनताको बताया कि आज फिरसे अकाल भारतकी ओर मुँह बाये खड़ा है आपको उससे खबरदार रहना चाहिए। अब हम ३५ लाखकी मौतके बाद एक करोड़ मानवोंकी आहुति नहीं दे सकते! इस बार हम ब्रिटिश हुकूमतको दिखा देंगे कि अब करोड़ मनुष्य भूखसे घुल घुलकर यों ही नहीं मर जाएंगे बल्कि लड़ लड़कर मरेंगे अन्न छीनकर खाएँगे पर कुत्तेकी मौत नहीं, वीरोंकी मौत मरेंगे। नहीं तो आनेवाली जनता यही कहेगी कि ३५ लाखकी मौतके बाद भी हिन्दुस्तानकी आँखें न खुलीं। हमें इस मंजिलको कैसे पार करना होगा यह विचार अभीसे कर लेना चाहिए।

ब्रिटिश हुकूमतके फौलादी पंजोंको हटाना कोई आसान काम नहीं है हमारी बहुतसी कमजोरियां अभी तक हमारी मंजिलकी रुकावटें बन रही हैं। हमारे बहुतसे नेताओंकी यह मान्यता है कि भारत आज़ाद हो गया है, ब्रिटिश सरकार भारतकी राष्ट्रीय भावनाओंको जानकर उसे जल्द ही आजादी दे देगी।

हमारे गाँधीजी, नेहरूजी और सरदार पटेल जैसे लोकप्रिय नेताओंने हमें नींदसे जगाया है हममें स्वतन्त्रताकी भावनाको जागृत किया है। पर हम नम्रता पूर्वक उनसे यही कहना चाहते हैं कि आजादी ऐसे नहीं आएगी। सिर्फ असेम्बलियोंमें जानेभरसे आजादीका आना जरूरी नहीं हो जाता अगर सच मुच ही ब्रिटिश सरकार हमें आजादी देना चाहती तो जो गोलीकांड हुए और कलकत्तामें हुए हैं वे न होते, जयप्रकाश और लोहिया अभी तक जेलके सीखचोंमें बन्द न रहते। नेताओं हमारा यही निवेदन है कि यह आजादी नहीं है, बल्कि गुलामीके लिएही फँसानेका एक दूसरा जाल फैलाया जा रहा है।

ब्रिटेन और भारतके पूंजीपतियोंमें जो नये नये समझौते हुए हैं, वे भारतकी परतन्त्रताको और अधिक बढानेके लिए हैं। समझौते या संधिका हाथ बढाने से कभी स्वतन्त्रता नहीं आती। स्वतन्त्रताका मार्ग संगठन और लगातार संघर्ष का है। मजदूर और किसानोंकी क्रांति ही स्वतन्त्रता लानेकी सामर्थ्य रखती है पूंजीपति और उद्योगपति किसीभी हालतमें आजादी नहीं ला सकते। इसीलिए हम एकबार फिर दूसरे संघर्षकी तैयारी करनी होगी।

जहाँ असेम्बली भवनपर यूनियन जैक लहरा रहा है वहाँ हमारे नेताओंकी मोटरोंपर लहराता हुआ तिरंगा झंडा पहुँचगा। उस वक्तभी अगर गोरे लोग भारतमें रहेंगे तो यह हम सहन न कर सकेंगे। पर यदि उस वक्तभी लोहिया जेलमें होंगे तो हम कांग्रेस मन्त्रिमंडलके पास पहुँचकर जेलकी कुन्जी मांगेंगे।

हम सबोंको वज्रकी तरह दृढ और कठोर होना होगा क्योंकि हम फिर एक बार संघर्षके लिए तैयार होना है। जन क्रांतिके सच्चे सिपाही होनेके पहिले हमें त्याग और संयमको सच्चे अर्थोंमें अपनाना होगा।

गाँव गाँव जाकर पंचायती राजका ढांचा बनाना होगा, और कम्युनिस्ट भाइयोंको समझाना होगा कि ब्रिटिश लोकतन्त्रका छद्मविचार वे अब छोड दें।

आगामी आंदोलनके कार्यक्रमके वर्णनमें अरुणाने सबसे पहले ब्रिटिशमाल बहिष्कारका कार्य बतलाया और यहभी कहा कि जब ब्रिटेनने लड़ाईका माल बनाना छोड़ दिया है, अब वह गाँव जनपर युद्ध व्ययका नुकसान पूरा करनेके

लिए भारतमें क्रान्तिके लिए सामान बना रहा है। आपका पहिला काम उस माल का सम्पूर्ण बहिष्कार करोगा है, जिससे कि देश आने वाली आर्थिक दासता से बच सके।

उसके बाद हम हमारी जरूरतोंका किसी तरहभी पूरी कर लगे—गांव गांवमें चरखेके केन्द्र होंगे और यह सब कांग्रेसके नेतृत्व में ही होगा क्योंकि जनताकी सच्ची संस्था कांग्रेस ही है चालीस करोड़ उसके सदस्य हैं इसलिए हमें उसे और अधिक शक्तिशाली बनाकर ब्रिटिश हुकूमतका खात्मा कर देना है।

बम्बईके ही एक उपनगर विले पारलेकी कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित एक सभामें सभापति पदसे श्री बी. जी. खरेने श्री मती अरुणाका परिचय देते हुए कहा कि—'हम आज भारतके नवजागरणकी एक प्रतीकके रूपमें श्रीमती अरुणाका स्वागत कर रहे हैं, सन् १९४२के अगस्त आन्दोलनके पहले जनता इन्हें अथवा इनके सहकारियोंको पहिचानती भी नहीं थी, किन्तु जब अगस्त क्रान्तिके समय इन वीर पुरुषों और महिलाओंने नेतृत्वमें देशने अमानुषिक जुल्मों और अत्याचारोंके विरुद्ध मोर्चा लिया तभी जनता इन्हें पहचानने लगी। क्रान्तिने इन सबको हमारे सामने ला दिया, मैं कहूंगा कि अरुणाके ही द्वारा उस आन्दोलनमें अनोखा जोश उमड़ पड़ा था।

तब सभापतिके इस भाषणके जवाबमें श्रीमती अरुणाने बतलाया था कि सभापतिके भाषणसे मैं सहमत हूँ क्योंकि मेरा परिचय आप लोगोंको ठीक तरहसे दिया गया है। १९४२ के पहिले मुझे बहुत कम लोग जानते थे, अगस्त क्रान्तिने ही हम लोगोंको अपनी क्षमता और शक्तिका परिचय कराया था। देशकी सर्व साधारण जनताके लिए भी यही कहा जा सकता है, पहले वह जानती न थी कि उसमें कितनी प्रबल शक्ति छुपी हुई है वह शक्ति ब्रिटिश शासनका विरोध और उन्मूलन करनेको उपयुक्त थी। तब जनताके पास किसी शस्त्र या बारूद गोलेका कुछ काम न था, जबकि सरकार इन सब साधनोंसे लैस थी। जनताको जब अपनी स्वाधीनताका खयाल हुआ, तब हमने भी जाना कि हम अपनी शक्ति पूर्वक

जनताका साथ दे सकते हैं। पर हम जेलमें बन्द रहना नहीं चाहते थे। जब हमारे अन्य सहयोगियोंको जेलोंमें भर दिया गया, तब हम शेष बाहर रहनेवालोंने अज्ञातवासमें रहकर आन्दोलन जारी रखनेका निर्णय किया। हमने जेलमें जाना नापसन्द क्यों किया इसका भी एक सबब है, हमें उस समय इस बातका आभास मिला था कि अगर इस आन्दोलनको तीन सप्ताहमें पर्याप्त सफलता न मिले तो गाँधीजी अनशन करेंगे, इसलिए हमने क्रान्तिको सम्पूर्ण वेगवती बनानेके लिए अपना सब कुछ लगा दिया, उस समय यही एक मार्ग था कि हम अज्ञात रहकर क्रान्तिकी पूर्ति करें।

ब्रिटिश सरकार और उसके एजेण्टोंकी यह मान्यता थी कि यह जो चारों ओर एकाएक ज्वाला भड़क उठी है उसकी योजना बहुत पहिलेसे की गई होगी। ऐसे विचारोंके लिये मुझे उनपर दया आता है, क्योंकि हमारे पास उसके पहिले कार्यक्रमके नामपर कुछ भी न था, और न हमारे नेताओंके के पास ही। यकायक चारों ओरके इस विस्फोटसे सरकार भय ग्रस्त और आश्चर्य में विमूढ़ हो गई। उसने भूतपूर्व वायसराय लॉर्ड लिनलिथगोको एक एक सदेशमें बताया भी था कि 'देशके नेताओंको जेलोंमें ठूँस देनेके बाद भी जनता ब्रिटिश सशस्त्र शक्तिका जोरदार मुकाबिला करेगी यह किसीने सोचा भी न था।' जनताने मृत्युका डर छोड़कर सरकारके पशु-बलका अहिंसासे सामना किया, बहुतसे व्यक्तियोंने देशके लिये अपनी देहका बलिदान दिया। भले ही उन शहीदोंके नाम स्वर्णाक्षरोंमें न लिखे जायँ पर उनके नाम हमारे स्वतन्त्रता आन्दोलनके इतिहासमें खूनके अक्षरोंसे जरूर लिखे जाएँगे।

सरकारको इस बातका भान भी न था कि स्वतन्त्रता आन्दोलनके पूज्य पिता गाधीजीका जनशक्तिपर क्या प्रभाव पड़ सकता है, बहुत देरके बाद वह इस असलियतको जान सकी। सर स्टेफर्ड क्रिप्सके निराश होकर विदा होनेके साथ ही क्रान्तिका आरम्भ हुआ। इन दो घटनाओंके बीच जो समय बचा था, गाधीजीने उसका पूरा पूरा उपयोग लिया। अर्थात् ज्योंही गाधीजीको हमारे बीचसे हटाकर जेलमें बन्द किया गया त्योंही गांधीजीके मुक्तिमन्त्रके जादूने अपना असर दिखाया। उस मन्त्रके शब्द बिलकुल

सीधे सादे होते हुए भी, जनताम नवजागृति उत्पन्न करनेके लिये काफी थे।

युद्ध समाप्त होते ही अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धोंकी तब्दीलीसे सरकारने लाचार होकर अपनी भारत नीतिमें थोड़ा बहुत फेरफार किया है। पर हमें उनकी भ्रमपूर्ण बातोंकी भूलभुलैयामें भूल कर भी न पड़ना चाहिए। आज ब्रिटिश साम्राज्यवादका सिंहासन डगमगा रहा है उसके स्थिर पैर काँप रहे हैं क्योंकि वे देशके दलदलमें बुरी तरह फँसे हुए हैं। हम सबोंको मिलकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे कि वे पैर हमारी भूमिमेंसे निकल जाएँ और हमें हमेशाके लिये उसके पंजोंसे छुटकारा मिल जाय।

आज हमारे नेतागण समझौतेके जिस पहलूसे स्वतन्त्रताका प्रयत्न कर रहे हैं, वह स्वतन्त्रतासे दरअसल बहुत दूर है, उसके लिए तो हमें साम्राज्यवादके मूलपर प्रहार करना होगा और वह मूल उसका व्यापार है। हमारा उद्देश्य यही होना चाहिये कि हम वहाँसे आनेवाले मालका सम्पूर्ण बहिष्कार करें और, किसी भी तरहके कच्चे मालको वहाँ भेजनेसे रोकें। ऐसा करनेसे ही पूजीपतियों द्वारा देशके विरुद्ध जो षड्यन्त्र रचा जा रहा है उसका अन्त हो सकता है।'

प्रान्तोंमें स्थापित होनेवाली लोकप्रिय राष्ट्रीय सरकारके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि 'हमें उसे आजादीकी कसौटीपर कसकर देखना है कि उसमें कितनी राष्ट्रीयता है? उसका सच्चा मूल्य हमारी दृष्टिमें तब ही होगा जब उसकी सत्ता हाथमें लेते ही समस्त राजनैतिक कैदियोंकी मुक्ति हो जाय। उन्हें उस सत्ताके उपयोगसे आष्ठी और चिमूर काण्डके जल्लादोंको ढूँढ ढूँढ सजा देनी होगी। राष्ट्रीय सरकारकी परख करनेकी और भी बहुतसी कसौटियाँ हैं। हमें देखना है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार उस यूनियन जैकको कबतक चलाती है कि जिसने हमारे तिरंगे झण्डे का बार बार अपमान किया है। ऐसे कई प्रकार हैं जिससे हम राष्ट्रीय सरकारकी परीक्षा कर सकें। अगर इन बातोंमें वह असफल रही तो हमें उसका मुकाबला करना होगा!'

अभी कुछ ही दिनों पहले जब बबई बन्दरगाहके 'तलवार' वगैरह जहाजोंके भारतीय नाविकोंने, उग्र असंतोषके कारण सरकारके विरुद्ध आन्दो

लान और खुला विद्रोह किया था, तब श्रीमती अरुणा बम्बईमें ही थीं। वह समय था जब भारतीय नाविकोंका प्रकोप एकाएक विस्फोटकी तरह फूट पड़ा उनके द्वारा, गुरुवार ता २१ फरवरीसे रविवार २४ फरवरी तक शहर में जो भीषण अशांति फैल गई थी उसका विस्तृत वर्णन समाचारपत्रोंमें प्रकट हो चुका है। बहुतसे लोगोंकी यह मान्यता है कि इस विद्रोहका अरुणासे सम्बन्ध था। किन्तु दर असलमें इस विद्रोहका सम्बन्ध अरुणासे कहाँ तक था इसका खुलासा उनके द्वारा अखबारोंको दिये गये एक वक्तव्यसे मालूम हो जाता है। वह इस प्रकार था—

"नौसेनाके भारतीय नाविकोंने हड़ताल की, और उनके द्वारा जो उपद्रव किये गये उनसे शहरके नागरिकोंको तकलीफका सामना करना पड़ा। इस सम्बन्धमें मैं कहाँ तक दोषी हूँ, यह मुझे स्पष्ट करना चाहिए। मेरा इस विद्रोहमें कहाँ तक हिस्सा है इस बारेमें बहुत सी अफवाहें उड़ी हैं। इसलिए मुझे नाविक विद्रोहके प्रारंभसे अंत तकका वर्णन व्यक्त करना चाहिए।

बम्बईमें मेरे आनेका कारण, मुझे अपने कई सहकारियोंसे मिलनेकी तीव्र उत्कंठा थी। इतना ही नहीं, गये तीन वर्षोंमें विरोध करनेके जो जो नये तरीके मालूम हुए हैं उसे लक्ष्यमें रखकर कांग्रेसने जो कार्यक्रम बनाये, उसे अपनाना भी मेरा उद्देश्य था। मेरे सम्मानमें बम्बईमें जिन जिन सभाओंकी योजना की गई थीं उनमें मैंने अपनी भावनाको जनताके सामने रखा था मैं देखती थी कि उत्साहपूर्वक मेरे भाषण सुननेके लिए बहुतसे सैनिक भी आते हैं।

इस शनिवारको, भारतीय नौसेनाके कुछ प्रतिनिधियोंने मुझे नौकादलसे फैलते हुए उग्र वातावरणसे परिचित कराया। सोमवारको मुझे खबर दी गई कि नाविकोंने हड़ताल कर दी और बहुतोंने अनशन भी शुरू कर दिया है। मुझसे उन्होंने सलाह मांगनी चाही कि उनके कार्यक्रमकी विधि क्या हो?

मैंने उन्हें शांतिपूर्वक रहनेको कहा और एक हड़ताल कमेटी बनाकर उसके सदस्योंको चुननेका आदेश दिया। जब मुझे उनकी माँगोंका खयाल आया तब मैंने देखा कि उन माँगोंमें बहुत-सी माँगे राजनीतिसे सम्बन्ध रखती

हैं। मैंने उन्हें बताया कि वे सब राजनैतिक मामले छोड़कर सिर्फ नौकरी सम्बन्धी बातोंको ही अपने अफसरोंके सामने पेश करें। मैंने उनसे यह भी कहा था कि वे अपनी माँगोंको नौकरीके सुधार सम्बन्ध तक ही सीमित रखें। और आज़ाद हिन्द फौजको छोड़ने और उसी तरहकी दूसरी माँगोंको मिलाकर उसे राजनैतिक रूप न दें।'

इसके बाद फिर एकबार उनके प्रतिनिधिगण मुझसे मिले और कहा कि मैं उनकी ओरसे इन मामलोंको अपने हाथोंमें लूँ। इतना ही नहीं, उन्होंने मुझे अपनी सभामें भाषण देनेका भी निमन्त्रण दिया। जब मुझे लगा कि उन्हें अपनी इन वाजिब माँगोंकी पूर्तिके लिए राष्ट्रीय शक्तिकी जरूरत है, तब मैंने उन लोगोंसे सरदार पटेलसे सलाह लेनेकी बात कही क्योंकि बम्बईमें इस समय वे ही काँग्रेसके सर्वोच्च प्रामाणिक व्यक्ति कहे जा सकते हैं। साथ ही साथ मैंने उन लोगोंको यह सलाह यह भी दी कि वे फिलहाल एक 'मध्यस्थ समिति' बनाएँ जिसके लिए नाविकोंमेंसे ही प्रतिनिधियोंको चुना जाए। ऐसा होनेसे उनका संगठन मजबूत होगा।

मैंने उन्हें, उनकी सभामें भाषण करनेसे इन्कार कर दिया क्योंकि उनमेंसे कुछ लोग प्रान्तीय मुस्लिम लीगसे सलाह लेना चाहते थे, इसलिए मैंने उन्हें पूर्ण रूपसे कांग्रेसकी मदद देनेसे इन्कार कर दिया। फिर भी मैं बम्बई छोड़ कर जानेवाली थी इसलिए मैंने विद्यार्थियों, मजदूरों और अन्य कार्यकर्ताओंसे उनकी माँगोंके लिए मदद देनेकी सलाह दी थी, साथ ही मैंने कार्यकर्ताओंसे यह भी निवेदन किया था कि यदि नौसैनिकोंको खुराककी तंगी हो तो उसे पूरी करनेका वे भरसक प्रयत्न करें। उसके बाद मैं पूनाके लिये रवाना हो गई।

जब मैं पूनासे वापिस बम्बई आई तब मैंने देखा कि नौसैनिकोंने वातावरणको काफी उग्र बना दिया है। नौसैनिकोंके एक अफसर गॉडफ्रेके रेडियो ब्राडकास्टने अखबारोंमें आँधी सी मचा दी थी, उन्होंने नौसैनिकोंको धमकी दी थी कि 'अगर वे शरणमें न आएंगे तो नष्ट कर दिये जाएंगे।' गॉडफ्रेके भाषणने बारूदमें आग लगा दी, और तीन दिन तक शहरमें वह भीषण

निस्फोट होता रहा, किन्तु उस अराजकताके जवाबदार नाविकोंके बजाय मवाली लोग हैं।

नौसेनाके अधिकांश सैनिक सरदार पटेलकी सलाह–'बिना शर्त आत्मसमर्पण' को माननेमें आनाकानी कर रहे थे। हालत ज्यादासे ज्यादा खतरनाक होती जा रही थी। नौसैनिकोंने अपनी माँगोंके अस्वीकार कर दिये जाने पर शहर पर बम छोड़ने की धमकी दी थी। इसीलिए 'मने परिस्थिति को काबूमें लानेके लिए पडित नेहरू को तार द्वारा बुलाने की सूचना दी।'

बम्बईका यह तूफान चार दिनों तक पूरे वेग में रहा, और इसमें सबसे बड़ा हिस्सा मवालियों और गुन्डों का था। परिस्थिति को सम्हालनेके लिए मिलिटरीने जनता पर बेधड़क गोली कांड किये इन सब बातोंका विवरण अखबारोंमें प्रकाशित हो चुका है। पर हम उनके वक्तव्य से जान सकते हैं कि इस विद्रोह से अरुणाका कहा तक सम्बन्ध है; यद्यपि उन्हें इस तरह के फौजी मामले में मध्यस्थ बनने के लिए गाधी जी के सिवा अन्य नेताओं का उलाहना भी सुनना पड़ा था। उन्होंने अरुणा की इस कार्यवाही को, 'गुप्त आन्दोलन' का नाम भी दिया। क्योंकि अब कांग्रेस 'गैरकानूनी' नहीं रही, तो अरुणा को, ये सब 'गुप्त आन्दोलन' छोड़कर जाहिर में सब कुछ करनेकी सलाह कांग्रेसकी ओर से दी गई थी। कुछ भी हो आज भी गाधीजी और पडित नेहरूके हृदयोंमें इस वीर रमणीके लिए अपूर्व सम्मान है, और उन्होंने समय समय पर १९४२ के आन्दोलन को वीरतापूर्वक निबाहने के लिए इस वीर रमणी को श्रद्धाजलियाँ अर्पित की हैं।

अगस्त-प्रस्ताव

जिस समय दुनियामें चारों ओर युद्धकी ज्वालाएं दहक रही थी, और ब्रिटेनके अच्छे अच्छे पूर्वीय बन्दरगाह जापानियोंके हाथमें जा रहे थे, तब भारत कई तरहके भय, शंकाओं और भुखमरीकी मारसे आहत हो रहा था, भय और अंधेरा छा रहा था। जापानियोंके आक्रमणका भारतको सबसे ज्यादा डर था। उस समय कॉंग्रेस दृढ़ निश्चयके साथ उठ खड़ी हुई। वह सन १९४२ था। और उसी अवधिमें कांग्रेसने अपना अगस्त प्रस्ताव पास किया।

इस प्रस्तावने भारतकी जनतामें एक नया जीवन मंत्र फूंक दिया, नई जागृति खिल उठी। देशके नवयुवकोंने आगे कदम बढ़ाया। श्री० जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, श्रीमती अरुणा, आदि तात्कालिक कॉंग्रेस जनोंने नेतृत्व अपने हाथमें लिया और इकट्ठे होकर सरकारसे संघर्ष करनेका नया मार्ग बनाया। उनकी आँखोंमें नई चमक थी, अनंत धैर्य और अडिग विश्वास था, क्यों कि उस चमककी आत्मा आजादी थी। उन्हें ब्रिटिश सरकारको इस बात की सूझ दिलानी थी कि भीषण अत्याचारोंके बादभी जन-शक्ति कभी उनके आगे नहीं झुकेगी और इसीलिए उन्होंने ए आय सी सी के अगस्त प्रस्ताव को कार्यमें अति शीघ्र परिणित कर दिया था। इस आन्दोलनके लिए जिन्होंने सर्वस्व समर्पित कर दिया था उन कॉंग्रेसवीरोंके अज्ञातवासकी कथाओंमें जनता रस लेती है, और निस्सन्देह यह बात स्वाभाविक भी है कि जिस अगस्त प्रस्तावके मूलसे अनेक आश्चर्य जनक घटनाएँ प्रगट हुई, जन क्रांतिकी उत्पत्ति हुई और अज्ञात वासी कार्यकर्ताओं द्वारा जो आन्दोलन किया गया उसे जानने केलिए जनता आतुर हो।

अगर १९४२ में कांग्रेसने अगस्त प्रस्ताव पास न किया होता, गांधीजीने 'करो या मरो' सूत्रकी पुकार न की होती और जनताको व्यक्ति स्वातंत्र्य न दिया होता तो आज श्रीमती अरुणा हमारे सामने न होती और न उनकी रोमांच कहानियाँ ही। किन्तु अब तो सरकारके प्रतिबंध उठा लेनेसे ही हम उनकी

कांग्रेस कमेटीकी एक बैठक बुलाई, जिसमें गांधीने प्रस्तावके विषयमें सफाई दी, जिसका विवरण १८ जनवरी '४२.के हरिजनमें ऐसा दिया गया था—

'बारडोली प्रस्तावका ऐसा अर्थ किया जाता है कि यदि सरकारकी ओरसे कांग्रेसको ऐसा विश्वास दिलाया जाय कि वह हमें युद्धके बाद सम्पूर्ण स्वतन्त्रता देगी, तो कॉंग्रेस साम्राज्यवादको जीवित रखना चाहती है। इसका मतलब यह नहीं कि, यह कोई सौदा है, बल्कि सिर्फ ये शर्तें रखी हैं। अगर मुझे इस सौदेमें उतरना हो तो मुझे खुले तौरपर ऐसा बता देना चाहिए।'

उपरोक्त प्रस्ताव गुजरात प्रान्तीय कॉंग्रेस कमेटीने ७७ के विरुद्ध ३६ मतोंसे पास किया था। इसके सिवा ए आइ सी सी की जनवरी १९४२ की वर्धा मीटिंगमें उपरोक्त प्रस्तावके विरोधियोंका समाधान किया गया, तथा राजेन्द्र बाबूके पक्षने उसका अनुमोदन किया। 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' की १७ जनवरी '४२ की आवृत्तिमें इसके बारेमें निम्नलिखित विवरण दिया गया था—

'हमारे मतानुसार ऐसे समयमें देशको युद्धमें टकेलना सचमुच एक बड़ी भूल होगी। इस प्रस्तावसे प्रतीत होता है कि हम यह मानते हैं कि दुश्मनका हथियारोंसे मुकाबला करना देशके लिये अच्छा नहीं है, साथ ही साथ हम यह भी मानते हैं कि, प्रस्तावमें 'हथियारोंसे सामना करने' का सकेत है उसका मतलब यह नहीं है कि हम आज ही हथियार उठालें। यह तो तब ही सभव है कि जब ब्रिटिश सरकार भारतको स्वतन्त्र करनेकी घोषणा करे और भारतकी समस्त सत्ता हमारे हाथोंमें सौंप दे, किन्तु इसकी सभावना या चिह्न आज दिखाई नहीं देते।'

अन्तमें यही निर्णय किया गया कि, गांधी और नेहरूजीके दोनों पक्षोंका एक संयुक्त मोर्चा ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध खड़ा किया जाए, और सरकारको समझौतेके लिए समझाया जाय।

इसी अवधिमें दिसम्बर ४१ से मई '४२ के बीच, जबकि सर स्टेफर्ड क्रिप्स अपने समझौतों और निवेदनोंको लेकर भारत आये, तब युद्धजन्य

परिस्थितियोंमें आश्चर्यजनक परिवर्तन हो रहे थे । मलाया और सिंगापुरका पतन हो गया था, और जापानी बर्मामें प्रविष्ट हो चुके थे । मार्चके मध्यतक रंगून भी गया और मार्चके अन्तमें क्रिप्स भारत आये।

इन सहसा परिवर्तनोंने भारतको भ्रममें डाल दिया । चर्चिलसे ब्रिटिश नीतिके श्रद्धालु पुराने राजनीतिज्ञोंकी ऐसी मान्यता थी कि जापानी और और नजदीक आकर ब्रिटिशके शिकंजे में फँसते जा रहे हैं। मौका देखकर ब्रिटिश उनपर टूटकर उन्हें राह लगेंगे। पर काँग्रेसकी यह मान्यता थी कि ब्रिटेन इस अवसर पर घबराकर समझौतेके लिये हाथ बढ़ायेगा। उस वक्त भारतकी जनता भी, चारों ओर जापानियोंकी विजय और ब्रिटेनकी पराजयकी संभावना करती थी।

इस तरफ संकेत करके प० नेहरूने अपने १६ जुलाई ' ४२ के वक्तव्यमें कहा था कि—

तीन चार महीनोंसे मैं देख रहा हूँ कि जनता जापानियोंके पक्षमें झुकती नजर आ रही है किन्तु जनताकी यह भावना जापानियोंका पक्ष नहीं रखती। वास्तवमें जनतामें ब्रिटिश विरोधी भावना इतनी प्रबल हो चुकी है कि हमें ज्ञात होता है कि वह जापानियोंका पक्ष ले रही है। हमें यह बिलकुल पसंद नहीं है कि भारत जापानियोंके साथ इस तरहकी सहानुभूति दिखाए। जापानके साथ मित्रता करनेका विचारही भयंकर है !

भारतमें क्रिप्सके आगमनका श्रेय किसे था ? स्वयं ब्रिटिश सरकारने ब्रिटिश जनताकी आलोचनाओं और दबावके कारण उन्हें भेजनेके लिए लाचार किया था, यह सब होते हुए परभी क्रिप्स तो चर्चिलके हाथका खिलौना था। लेनिनने भी एक जगह कहा है कि"जब जब विरोध और क्रांति बढ़ती है तब तब शासक कोई दूसराही रास्ता अख्तियार करता है।" क्रिप्सको भी उसी रूपमें भारत भेजा गया था। ब्रिटिश साम्राज्यवादी भारतके जोशको ठंडा करना चाहतेथे वे साम्राज्यवादी कोई मामूली राजनीतिज्ञ नहीं हो सकते जिनके पास तीन सौ वर्षकी राजनीतिका अनुभव है।

क्रिप्सने आकर भारतके विभिन्न कांग्रेसी और लीगी नेताओंके साथ मंत्रणाएँ

गुरू की किन्तु मूलमें जब उसके पास कुछ देनेके लिए था ही नहीं तो वे मत्रणाएं अपने आप टूट गई। क्रिप्सने ब्रिटिश नीतिकी कैफियत देते हुए एक वक्तव्य प्रस्तुत किया, जिसमे ब्रिटेनकी शुद्ध भावनाओंको समझानेका प्रयास किया गया था। उसने यह आक्षेप भी किया कि भारतके विभिन्न पक्षोंके नेतागण उससे मत्रणा करनेके लिए कई बार मिले उन्होंने समान मार्गपर खड़े होकर एक दूसरेके दृष्टिकोणोंको समझानेका प्रयत्न किया किन्तु उनमेंसे कोई भी समझौते पर नहीं आ सका।

पंडित नेहरूको क्रिप्सकी इस राजखिलवाड़का आभास पहलेही हो चुका था, वे चौंक उठे। भारतीयोंको इस तरहकी गड़बड़में डालकर परेशान करनेकी साम्राज्यवादी नीतिकी झांकी उन्हें पहलेसी मिल चुकी थी। उन्होंने जनताको उस जालमें न फँसनेकी चेतावनी दी। ता १२ एप्रिल ४२ के दिन एक प्रेस कॉन्फ्रेंसमें उन्होंने कहा कि—

हमारे सम्मुख आज एक ऐसी परिस्थिति है कि कोई भी जिम्मेदार व्यक्ति इस समस्यामें टालमटोलकी बातें नहीं कर सकता। हमें वातावरणमें कड़ुआहट पैदा करना भी ठीक नहीं है क्यों कि कटुआहटके कारण हम गैर रास्ते चल पड़ेंगे और इस गम्भीर विरोधी समयमें हमारे आखिरी फैसले तक पहुँचने में गड़बड़ी पैदा करेंगे,

लेकिन हम यह जानते हैं कि क्रिप्सके वार्तालापका कोई परिणाम न निकला तब कांग्रेसके दोनों पक्षोंमें एकता हुई। युद्ध नजदीक आता जारहा था, जापानियोंका मुकाबला होना ही चाहिए, स्वतंत्र भारतकी दृष्टिसे कांग्रेस युद्धका मुकाबला करे इस व्यवस्थाकी जरूरत थी। तब प नेहरूने ता १२ अप्रेल ४२ को एक वक्तव्यमें बताया कि—'आज कॉंग्रेस कार्यकर्ताओं और सर्व साधारणको स्वरक्षा और व्यवस्थाका कार्यक्रम बनाना चाहिए और उस पर चलना चाहिए, शायद ऐसा वक्त भी आये कि हमें जापानसे गोरिल्ला युद्ध करना पड़े। मैं यह नहीं जानता कि कॉंग्रेस क्या निर्णय करेगी, पर यह तो एक स्वरक्षा-समितिका बीजारोपण करनेकी बात है। हम जिस सस्थाकी योजना बना रहे हैं वह हमें वर्तमान पेचीदी परिस्थितियोंका मुकाबला करनेमें मदद देगी। आपसे मेरा यही निवेदन है कि आप किसीकी शरणागति मानकर शरणमें

जाँए, और न दुश्मनोंको किसी तरहकी मदद करें। आप लोगोंको उनके साथ असहयोग करनेकी नीति अपनाना चाहिए, वैसेही उनके लिए जितनी रुकावट डाली जा सके, डालना चाहिए। हमारी सशस्त्र सेना ही उनका मुकाबला करेगी।

किन्तु पं. जवाहरकी ये बातें गांधीजी को न सुहाई। उन्होंने २५ एप्रिल के हरिजनमें पंडितजीकी उस नीतिके विरोधमें लिखा कि— किसी भी तरहके अधिकार प्राप्तिके बिना, वैसे ही फिलहाल ब्रिटिशके साथ समझौतेमें सफलता न मिलनेके बाद उसके युद्ध प्रयत्नोंमें इस तरह हिंसक तरीकोंसे मदद करना देशको नीचा दिखानेकी बात होगी।

पुनः ए. आइ. सी. सी. की इलाहाबादकी बैठकमें, ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध जोशीले भाषण हुए—'अब हम सरकारसे समझौता करनेके लिए न जाएँगे'। उस वक्त कांग्रेसके मन्तव्यों और नीतिमें परिवर्तन हुए थे। उपरोक्त बैठकमें पं. नेहरूने मुख्य प्रस्ताव पेश करते हुए बताया कि—

युद्धके वक्त देशकी रक्षा दूसरे ही तरीकेसे की जाती है, मैं मानता हूं कि अगर हमें वैसा अवसर मिला होता कि हम अपनी आजादी और बलिदानकी भावनाके अनुकूल युद्ध कर सकते, तो अवश्य देशकी रक्षा करते। पर वह अवसर हमें नहीं दिया गया, इसलिए आइन्दा जो कुछ भी होगा वह ब्रिटिश सरकारका कसूर होगा। सरकार हमें स्वाभिमानके साथ जीने तो नहीं देती, पर मरने भी नहीं देती।'

इस तरह वक्त-वक्त पर गांधीजीके तटस्थ पक्ष और जवाहरके प्रगति पक्षमें मतभेद होता रहा, किन्तु अन्तमें पंडितजीको ही झुकना पड़ा। हिंसक तरीकासे जापानियोंका मुकाबला करनेकी बात गांधीजीको न जँचनेसे उन्हें छोड़ देनी पड़ी। सरदार पटेलने विभिन्न पक्षोंके मतभेदोंका अवलोकन करते हुए बताया कि—

'जबसे युद्ध प्रारम्भ हुआ तबसे दोनों पक्षोंने संयुक्त होकर कार्यको आगे बढ़ाया है, किन्तु इस अवसरपर ऐसा नहीं हो सकता। गांधीजी अपने निर्णय पर अटल हैं। यदि उनका यह निर्णय कार्य समितिके किसी सदस्यको ठीक न

न लगता तो मुझे भी ठीक न लगता। मैंने तो अपने आपको गांधीजीके हाथमें सौंप दिया है। ऐसी विचित्र परिस्थितिमें जो सलाह वे देते हैं, वही मुझे सच्ची मालूम होती है। ऐसा मतभेद ए आइ सी सी की बम्बईकी बैठकमें भी उपस्थित हुआ था, उस वक्त दूसरे ही ढंगसे सरकारसे सम्पर्क स्थापित करनेकी बात थी। उस वक्त और अधिक सलाह मशविरे या सम-झौतेके लिए कांग्रेसने अपने द्वार खुले रख लिए थे। किन्तु बारडोलीकी बैठकमें यह स्पष्ट किया गया था कि, ऐसे कई विषय हैं जिनपर अभी भी वार्तालाप किया जा सकता है। मित्रराष्ट्रोंमें हमारी सद्भावना थी। किन्तु अब ऐसा मौका आ गया है कि हम कहना पड़ता है, कि समझौतेकी वार्ताके लिए कांग्रेसके द्वार अब बंद किए जा चुके हैं। बार बार हमारा अपमान किये जानेसे हमने यह कदम बढ़ाया है।"

इस प्रकार कांग्रेस और सरकारके समझौतेकी वार्तोंपर बाधायें बढ़ती जा रही थीं। गांधीजी, जिन्होंने हमेशा ही ब्रिटेनको मित्रताकी आखोंसे देखा था, की चिढ़ भी बढ़ रही थी। उस वक्त उन्होंने २६ अप्रिलके 'हरिजन' में लिखा कि—

सरकारने जितनी योजनायें भारतकी तथाकथित रक्षाके लिए की है उनमें कहीं भी मुझे आजादीके दर्शन नहीं होते। मुझे तो ऐसा लगता है कि ये सब रक्षाकी तैयारियां ब्रिटिश साम्राज्यकी रक्षाके लिए ही की गई हैं। जिस तरह ब्रिटेनको सिंगापुर छोड़ देना पड़ा, उसी तरह अगर वे भारतको भी उसकी किस्मतपर छोड़कर चले जायें, तो शायद अहिंसक भारतको कुछ भी खोना नहीं पड़ेगा। शायद ऐसा भी हो कि जापानी भारतको स्वशासन करनेके लिए कहें।'

इसके बाद ता १४ वीं के दिन वर्धामें कांग्रेस कार्य समितिकी बैठक हुई जिसमें अगस्त प्रस्तावकी रूपरेखा तैयार की गई। प्रस्तावमें कहा गया—

'क्रिप्स प्रस्तावकी अस्वीकृतिसे जो निराशा उत्पन्न हुई है, साथ ही साथ यह स्पष्ट हो जानेपर कि ब्रिटेन, भारतको अपने शिकंजेमें से छोड़ना नहीं चाहता। उनकी इस नीतिसे भारतकी जनतामें असतोषका वातावरण फैल रहा

है, और ब्रिटेनके प्रति विरोधकी भावना तीव्र गतिसे बढ़ रही है। [illegible] भावनाको शत्रुकी दृष्टिसे देखता है, [illegible] इस [illegible] छोड़कर मानसिक भी उतर आय।"

इस प्रस्तावको कुछ समाधानके साथ बम्बईमें अन्तिम रूप दिया गया। यह इस प्रकार था— ब्रिटिश शासनका भारतसे हटा लेना ही युद्धमें विजय, अथवा लोकतन्त्रकी सफलता निर्भर करती है। स्वतन्त्र भारत, नाजियों, फासिस्टों और साम्राज्यवादियोंके पंजोंसे विश्वको छुड़ानेके लिए अपनी समस्त शक्तिका उपयोग करेगा जिसके द्वारा युद्धके भविष्यपर निर्णयात्मक प्रभाव पड़ेगा। इतना ही नहीं, संयुक्तराष्ट्र जिनके साथ भारत भी गौरवान्वित होकर खड़ा होगा, वह अपने साथ समस्त पीड़ित हुई मानवताको भी लाकर खड़ी करेगा और विश्वभरमें आत्मबलकी प्रेरणाओंको सुभारत करेगा। इसलिए अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी ब्रिटेनको, भारतवर्ष से अपना शासन हटा लेनेकी मांग करती है। स्वतन्त्र भारतकी घोषणा की जानेके बाद एक अस्थायी राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना की जायेगी, और भारत, संयुक्त राष्ट्रों का साथी बनकर उनकी कठिनाइयों, संयुक्तशक्ति और आजादीकी लड़ाईमें अपना सब कुछ लगाकर उनके साथ खड़ा रहेगा। यह अस्थायी राष्ट्रीय सरकार देशके प्रमुख पक्षोंकी सम्मतिसे स्थापित की जायगी जिसका मुख्य काम आने वाले आक्रमणका सेना और अहिंसक तरीकोंसे सामना करके भारतकी रक्षा करना ही रहेगा। युद्ध मोर्चेपर गये हुये सैनिकों, कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरों, और दूसरे व्यक्तियोंकी सब जरूरतें पूरी की जायगी, और वास्तविक रूपमें उनके हाथोंमें ही सत्ता और उसका अंकुश रहेगा।

इसलिए कॉंग्रेस इस अन्तिम अवसर पर, ब्रिटेन और संयुक्तराष्ट्रोंसे निवेदन करती है कि वे विश्व स्वतन्त्रताकी भावनाके लिए भारतको स्वतन्त्र करें। कमेटी यह अनुभव करती है कि वर्तमान साम्राज्यवादी सरकार जो इस देशपर अंकुश जमाये है, और केवल अपने हितोंके लिए ही शासन कर रही है, वह इस देशके लिए मानवताके नामपर, स्वभाग्य निर्णयके प्रयत्नोंमें बाधा न डाले।

इसलिए यह समिति निर्णय करती है कि, भारतकी आजादी और स्वभाग्य निर्णयके उसके अधिकारोंको पानेके लिए, अहिंसाके सिद्धांतोंके आधारपर एक सामुदायिक और विशाल आन्दोलनकी योजना बनाई जाय, जिससे इस देशने अपने २२ वर्षके शांत आन्दोलनमें जो अहिंसात्मक शक्ति इकट्ठी की गई है, उसका उपयोग किया जाय। इस प्रकारका असहयोग महात्मा गांधी द्वारा परिचालित किया जाना उपयुक्त होनेके कारण, यह समिति गांधीजीसे निवेदन करती है कि वे इस कार्यक्रमका नेतृत्व अपने हाथोंमें लें और आगेके लिए भी अँगुली निर्देश करें।

इसके सिवा समितिने भारतकी जनतासे भी निवेदन किया कि, वह आगामी आन्दोलनके वक्त होनेवाली तकलीफोंको सहन करनेका अभ्यास करे, और गांधीजीके नेतृत्वमें संगठित बने तथा भारतीय स्वतन्त्रताके सच्चे सैनिक बनकर अनुशासनपूर्वक उनके आदेशोंपर अमल करे। उसे यह याद रहना चाहिए कि आगामी आन्दोलनका मुख्य आधार अहिंसा है। शायद ऐसा भी समय आ सकता है जब प्रत्येक व्यक्ति गांधीजीके आदेशोंको समयपर न पा सके, और समितिकी प्रांतीय शाखाओंके सब दफ्तर भी एकाएक बन्द हो जाएँ। यदि ऐसा हो तो हर एक स्त्री और पुरुषका, जिसने कि इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया हो, यह फर्ज है कि साधारण सूचनाएँ मिलते ही वह व्यक्तिगतरूपसे अपने आगामी कार्यक्रमकी रूपरेखा तैयार करे और उसपर अमल करे। प्रत्येक भारतीयको, जो कि देशकी आजादीकी भावना रखता है, आजादीके बीहड़ मार्गमें स्वयं अपना मार्गदर्शक बनना है।

अन्तमें यह अखिल भारतवर्षीय कॉंग्रेस कमेटी जिसने स्वतन्त्र भारतकी भावी सरकार बनानेके अपने दृष्टिकोणको यहाँ प्रस्तुत किया है, उसे प्यार स्पष्ट करते हुए बताना है कि इस सामूहिक आन्दोलनके द्वारा कॉंग्रेसका ध्येय खास सत्ताकी बागडोर अपने हाथमें लेनेका नहीं है, बल्कि ऐसी जो सत्ता प्राप्त होगी वह भारतकी समस्त जनताके हाथोंमें उपयुक्त होगी।

× × ×

यह अमरस्त प्रस्ताव ए आइ सी सी की बम्बई बैठकमें सर्वानुमतिसे

पास किया गया फिर भी कांग्रेसने जिस आन्दोलनकी पूर्वसूचना दे दी थी उसे शुरू करनेमें गाधीजीने ढील की । उनकी इच्छा यह नहीं थी कि किसी भी सामूहिक आन्दोलनके उभड़नेसे देशकी स्थिति डावाडोल हो । उन्हें यह देखना था कि प्रस्ताव पास करनेसे देश और ब्रिटिश सरकारपर क्या असर होता है ? बहुत गहराईमें उनकी ऐसी भी इच्छा थी कि यदि अब भी सरकार चाहे और समझौतेका हाथ बढ़ाये तो उसकी प्रतीक्षा की जाय ।

पर गाधीजीकी ठहरकर राह देखनेकी इच्छाका सरकारने उल्टा अर्थ लगाया। उसे लगा कि यह प्रस्ताव पास करके कांग्रेस भीतर ही लड़ाईकी तैयारी कर रही है । इसलिए सरकारने, जिसकी समझौतेकी इच्छा पहिलेसे ही न थी, गाधीजी वगैरह देशके नेताओंकी एक साथ गिरफ्तारी की, प्रत्याक्रमण का पहला प्रहार किया, और गाधीजीकी आशा टूट गई ।

उनकी गिरफ्तारीके थोड़े ही दिन बाद ता १४ अगस्त १९४२ के दिन गाधीजीने वायसरायको जो पत्र लिखा था, उसपरसे उनकी मनोभावनाका पता चलता है । उन्होंने लिखा था कि—'सरकारको तबतक धैर्य धारण करना चाहिए था कि जबतक कि मैं सामूहिक आन्दोलनकी शुरुआत नहीं करता, किसी भी निर्णयात्मक कदम उठानेके पहले, उसे एक पत्र द्वारा आपको सूचित करनेकी मेरी इच्छा थी, ऐसा मैंने जाहिर भी किया था। इस पत्रके द्वारा कांग्रेसका केस आपके सामने रखकर निष्पक्ष जाँचकी माँग करनेकी मेरी इच्छा थी । आप यह तो जानते ही हैं कि कांग्रेस अपनी माँगोंमें जो कुछ त्रुटियाँ होंगी उसे दूर करके ही आपके सामने रखती है । और यदि मुझे भी मौका दिया गया होता, तो हमारे मार्गमें आनेवाली कठिनाइयोंको दूर करनेके लिए मैं, जितना सम्भव होता, करता ।'

९ अगस्तको गाधीजीकी गिरफ्तारीके बाद समस्त देशका वातावरण उग्र हो गया, जनआन्दोलन प्रारम्भ हो गया । कॉंग्रेसकी कई शाखाओंने अज्ञात रहकर क्रांतिका मार्ग प्रशस्त किया । उन्होंने आम जनताको निर्देश करनेके लिए आदेश पत्र (फॉर्म) प्रकट करने शुरू किये । रात रात भर

छुपी साइक्लोस्टाइल मशीनें गूँजती रहतीं। स्वतन्त्रता संग्राम, प्रारम्भ हो चुका था, और सरकारने भी उसका दमन करनेके लिए सशस्त्र मुकाबिला किया, निःत्थे स्त्री और बच्चे पुलिसकी गोलियोंके शिकार हुए। जब नेतागण जेलसे छूटनेके बाद सितम्बर १९४५ में बंबईमें, ए आइ सी सी की बैठक हुई तब उसमें '४२ के जन आन्दोलनके लिए, राष्ट्रका अभिनन्दन करते हुए, एक प्रस्ताव पेश करके गांधीजीने कहा कि—'यह तो सर्वविदित है कि ८ अगस्त' ४२ के दिन ए आइ सी सी की बंबई बैठकमें काँग्रेसने, मित्रराष्ट्रोंसे, विश्व-स्वतन्त्रताके लिए जो सहयोगकी इच्छा प्रदर्शित की थी, उसे कुचल दिया गया, और जब भारत की समस्याके निराकरणके कार्यक्रमके निश्चयके बाद सरकारसे जवाब माँगा गया तब सरकारने जनतापर चारों ओरसे सशस्त्र प्रहार करके उसका जवाब दिया, और जनताको युद्धजनित कष्टों और सरकारके जुर्मोंकी दोहरी मार सहनी पड़ी।'

जनआन्दोलन और उसके बाद

गांधीजी तथा दूसरे नेताओंकी गिरफ्तारीसे जनता ब्रिटिश राज पर क्रुद्ध हो गई थी, उस वक्त उन्हें किसी नेताकी जरूरत थी जो उन्हें सही रास्ते पर ले जाता। किन्तु वे सब तो जेलके सींखचोंमें बन्द पड़े थे। लोगोंने उत्तेजित होकर टेलीफोनके तार काट डाले, वाहन व्यवहारको तितर बितर कर दिया, रेलकी पटरियोंको उखाड़ डाला रेलके छोटे छोटे पुलोंको उड़ा डाला लैटर बक्सोंको जला डाला और इसी तरहकी कई हिंसात्मक कार्रवाइयाँ कीं।

और यह स्वाभाविक भी था कि जनता यह सब करनेको बाध्य होती उसे कोई नेतृत्व करने वाला न मिला जिससे वह हिंसाकी ओर झुकी। जनता की उस समयकी उत्तेजना और भावना अवर्णनीय थी, अभी अभी प० जवाहरलालने भी कहा है कि 'अगर मैं १९४२ के आन्दोलनके वक्त जेलसे बाहर होता तो, यह कह नहीं सकता कि मैं क्या करता'।

प्रतिबन्धोंके गहन पर्दोंको चीर कर समय समय पर कई आदेशपत्र गाँधीजीकी सूचनाओंके साथ बाहर आने लगे थे, उन्होंने लोगोंको हड़ताल करनेका आदेश दिया और खुद चौबीस घंटेके अनशन व्रतके निर्णयके साथ कार्य करने लगे। एक आदेशपत्रमें गाँधीजीके आदेशके साथ इस प्रकार लिखा था—

'इस हड़तालमें सरकारी कचहरियोंमें काम करते हुए तथा सरकारी कारखानोंमें काम करने वाले मजदूरों, रेलवे और पोष्ट आफिसोंमें काम करने वालोंके लिए सम्मिलित होनेकी जरूरत नहीं है। हमारा स्पष्ट उद्देश्य यह है कि जापानी, नाजी फासिष्ट वगैरहका आक्रमण और ब्रिटिश साम्राज्यवादका अंकुश हम सहन नहीं कर सकते।'

यह सच था कि लोग हिंसाकी ओर झुके थे, फिर भी महात्माजीने अहिंसक आन्दोलन पर ही जोर दिया था उन्हें यह जरा भी पसन्द न था कि लोग हिंसात्मक कार्य करें और उसमें उनका नाम ले आकर मिलाएँ। इसलिए जब

बिहारके एक प्रमुख कार्यकर्ता अनुग्रह बाबूने जेलमें उनसे मुलाकातकी और आन्दोलनके लिए उनसे आदेश मांगा तो गांधीजीने उन्हें जो राय दी थी वह 'सर्च लाइट' पत्र की ता १० फरवरी १९४५ की आवृत्तिमें प्रगट की गई थी। वह निम्न प्रकार थी—

मुझे गांधीजीने आन्दोलनके बारेमें आदेश देते हुए कहा कि आप लोग अपने प्रत्येक कार्यमें अहिंसक ही रहें, उन्होंने कहीं भी हिंसात्मक या तोड़ फोड़की कार्यवाइयोंके लिए अपनी सम्मिति नहीं दी।

उन्होंने जोर देकर यह कहा था कि कांग्रेस कार्यकर्ताओंको बन सके वहाँ तक तोड़ फोड़की घटनाओंसे दूर रहना चाहिए। यद्यपि सरकारने हमारे बहुत से निर्दोष व्यक्तियोंको बिना सबूत जेलोंमें बन्द कर दिया है और उनके सिर अत्याचारोंका दोष थोपा है वह तो लोगोंकी तोड़ फोड़की प्रवृत्तिसे भी अधिक घृणात्मक है। सरकारकी ऐसी कार्यवाहियोंका विरोध होना ही चाहिए और यह अहिंसाकी दृष्टिसे गलत नहीं है, इसके सिवा उन्होंने कहा कि यदि हमने तोड़ फोड़की प्रवृतिको उत्तेजित किया तो हम जो राजसत्ता स्थापित करेंगे वह भी ऐसी ही अव्यवस्थित होगी। इस लिए ऐसी प्रवृतियोंको मानने वालोंका हम सहकार नहीं कर सकते, भले ही वे फिर हमें ही मार डालनेकी धमकी क्यों न दें।'

कुछ ही दिन पहले सोशियल वेलफेअर नामके अंग्रेजी साप्ताहिकमें श्री कन्हैयालाल मुंशीने अपने सम्पादकीय लेखमें, कांग्रेसियोंको इस तरहकी हिंसात्मक कार्यवाहियोंसे दूर रहनेकी सलाह दी थी, उन्होंने लिखा कि—

यदि हमें स्वराज्य प्राप्त करना हो और राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना करना हो तो अपनी बुद्धिको अस्थिर नहीं होने देना चाहिए। सशस्त्र सेनाएँ, नौका दल और हवाई सेना, सरकारके प्रमुख और प्रबल हथियार हैं, उनका महत्व उनके अनुशासनमें ही है। यदि अनुशासन भंग होता है तो राज्य और समाज दोनों असभ्य और जंगली बन जायँ। यदि क्रांतिमें भी किसी सेनाका कोई खास हिस्सा स्वदेशाभिमानियोंके साथ मिल जाय तो यह कार्य अनुशासन हीन नहीं कहा जा सकता। सेनाको तो अपनी मूल अनुशासनकी भावनासे सेना ही रहना होगी, इसमें परिवर्तन तो सिर्फ नियंताका ही होता है'

किन्तु ४२ के आन्दोलनमें लोगोंने बुद्धिकी स्थिरता और अनुशासन दोनोंको खो दिया था, क्योंकि वह वक्त ही अस्तव्यस्त था। देशके प्रमुख नेताओंके जेलमें चले जानेसे और सही मार्ग दर्शक न मिलनेके कारण बहुतसे युवक विद्रोही नेतागण प्रकट हुए, और उन सबमें मुख्य थीं। वीरांगना अरुणा अगस्त-आन्दोलन नवीन-क्रांतिकी एक चिनगारी थी सारे भारतमें उस वक्त नया आवेश व्याप्त हो रहा था। इतिहासमें एक अभूतपूर्व अध्याय जोड़ा गया, लोगोंको स्पष्ट प्रतीत होने लगा कि आजादी और नजदीक आ रही है, इतनी नजदीक कि हम उसे अभी हाथोंमें ले लेंगे। उस वक्त सरकारके भीषण दमन के बावजूद भी जनताका वह जोश न दबा, बल्कि और अधिक तेजीसे फुफकार उठा।

इसके साथ ही एक ओर भारत-व्यापी अकालकी भीषणता दिखाई दे रही थी। बंगालमें हर रोज हजारों आदमी कालके गालमें समा रहे थे। जापानी सेना भारतकी जमीनको रोंद डालनेके लिए दिन प्रति-दिन आगे बढ़ती जा रही थी, भारत सरकार उन्हें हटानेकी भरसक कोशिश कर रही थी उसी वक्त अगस्त क्रांतिकी उत्पत्ति हुई।

अरुणा और उनके नवयुवक साथियोंने जब देखा कि यदि उन्हें भी अन्य नेताओंकी तरह जेलमें डाल दिया जायगा तो क्रांतिकी ये सब कारस्तानियाँ एकाएक बंद हो जायेंगी, तब उन्होंने अज्ञातवासका निश्चय किया, उनका विचार तीन सप्ताहमें ही स्वतन्त्रता छीन लेना था।

उन्हें पहली बार १९४२ में साई हुई जनशक्तिका आभास मिला। सरकारके सशस्त्र दमनका सामना करके निःशस्त्र जनताने यह दिखा दिया कि जेलमें बंद हो जाना असलियतसे दूर होने जैसा था।

सारा भारत यह जानता है कि उस वक्त बलिया, सतारा, भागलपुर, मिदनापुर आदिकी जनताने क्या किया, और सरकारके जुल्मोंका सामना किस तरह किया। उस वक्त जनताम देश प्रेमका उन्नत जीवन लहरा रहता था। राष्ट्र प्रेमकी एक ऐसी आँधी उठी थी, जिसका सामना करनेकी शक्ति बहुत मँहगी थी। उस वक्त जनता किसी भी राष्ट्रविरोधी प्रवृत्तिको सहनेके लिए तैयार न थी।

इस लोक क्रांतिका प्रथम ज्वार अहमदाबादमें आया। सरकारकी दमन नीतिका निरोध करनेके लिए जो जुलूस निकाला गया उसपर पुलिसने निर्दयता पूर्वक गोली चलाई जिसमें उमाभाई कड़िया नामका एक बीस वर्षका युवक शहीद हुआ। क्रांतिका पहला कदम आगे बढा, वह युवक जुलूस और पुलिस बीचमें खडा हुआ था, पुलिसने गोली चलाई और पहले पहल उमाभाई काम आया।

गुप्त रूपसे छोटे बड़े सभी कौंग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको गिरफ्तार करनेका हुक्म जारी किया गया था। पहले तो कौंग्रेस कार्यसमितिके सभी सदस्योंको गिरफ्तार किया गया। बहुतसे साधारण कार्यकर्त्तागण गायब हो गए, किंतु उनके गायब हो जानेसे सरकारकी दृष्टिमें उनकी भीषणता और बढने लगी। उन अज्ञात कार्यकर्त्ताओंने गुप्त क्रांतिकारी कार्योंका प्रारम्भ किया, और उस वातावरणके अनुकूल नौकरशाहीके विरुद्ध जिस प्रकार आन्दोलन करना उप युक्त था वैसा ही किया गया। प्रमुख तीन क्रांतिकारी महिलाओंमेंसे दो को गिरफ्तार कर लिया, जिनके नाम उषा मेहता और एलाइस एलवर्स थे, और तीसरी, जो कि आजकल हमारे लिए बहुत ही प्रसिद्ध हो चुकी हैं, वह वीरांगना अरुणा, सरकारकी भरसक छानबीनके बाद भी कहीं मिल न सकीं। वे कभी यहाँ, और कभी वहाँ इस तरह सभा जगह दिखाई देती थीं, फिर भी गुप्त पुलिसका पजा उन तक नहीं पहुँच सका था। उनके घरपर सरकारी नोटिस चिपकाई गई थी और सरकारकी शरणमें, एक खास मुद्दत तक आने का हुक्म निकाला गया था। वह मुद्दत खत्म हो जानेपर भी अरुणा सरकार की शरणमें न गईं, वे वहीं छुपी रहीं, जहाँ पहले थी। उनके घर और मोटर पर सरकारने कब्जा कर लिया। उनके विरुद्ध तीन-तीन केस चलानेका सरकार ने निश्चय किया। बहुतसे सरकारी आदमियोंने जेलमें दूसरे राजनैतिक बंदियों के साथ रहकर उनकी अज्ञात बातोंको जाननेका भरसक प्रयत्न किया, किन्तु सरकार जिस रमणीका पता लगानेकी कोशिश कर रही थी वह गुप्त पुलिस से भी अधिक चालाक थी।

यह वह वक्त था जब उनके पति श्री आसफअली गंभीर बीमारीमें पड़े थे। अरुणा बहुत चाहती थीं कि वे उनके पास रहें किंतु उन्हें उनसे दूर दूर

भागना पड़ता था, क्योंकि गुप्त पुलिस श्री० आसफअलीकी प्रत्येक गतिविधि पर कड़ी नजर रख रही थी।

उस आन्दोलनके सूत्रधार तीन प्रमुख व्यक्ति थे— श्री० अरुणा आसफ अली, श्री० जयप्रकाश नारायण और डा० राममनोहर लोहिया। उषा मेहता भी शक्तिभर कार्य कर रही थी। ये सब अज्ञातवासी कार्यकर्तागण समाजवादी हैं और उस वक्त उनका यह दृढ निश्चय था कि वे क्रान्तिकी तरंगोंको उभारकर, लोगोंमें स्वतन्त्रताकी भावनाको जाग्रत करेंगे और ऐसा करनेमें यदि उन्हें शहीद भी होना पड़े तो भी स्वतन्त्रताकी भावनाओंको प्रज्वलित करनेके लिए वे ऐसा भी करेंगे।

१९४२ के उस आन्दोलनके वक्त कम्युनिस्टोंने बार बार रुकावट डाली, और अपनी हीन मनोवृत्तिका परिचय दिया। उनका कहना था कि कॉंग्रेस ने जनताके समक्ष कोई खास कार्यक्रम न रखा था इसलिए देशमें अराजकता फैल गई और लोगोंने जो चाहा सो किया। पर यह आरोप बिलकुल निराधार है। ए आई सी सी की बम्बई बैठकमें अगस्त प्रस्तावके बारेमें यह बात स्पष्ट कर दी गई थी कि प्रत्येक व्यक्ति कुछ भी करनेके लिए स्वतन्त्र होने कारण, 'करो या मरो' के कॉंग्रेसके आदेशके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपना कार्यक्रम बना ले।

उपर्युक्त युवक क्रान्तिकारियोंने देशमें जब क्रान्ति-युद्धका प्रारम्भ किया तब उन्होंने उस व्यक्ति स्वातन्त्र्यको मुख्य स्थान दिया था। यद्यपि गांधीजीको इन क्रान्तिकारियोंकी बहुत हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ पसन्द नहीं थीं, और उन्होंने अंत तक ऐसी कारवाइयोंका विरोध किया। गांधीजीने स्वयं अपने अति निकट सहकारी डॉ० किशोरलाल मशरूवालाके एक हिंसात्मक वक्तव्यकी खरी आलोचना की थी, इसलिए वे इन नवयुवक क्रान्तिकारियोंकी प्रवृत्तियोंको भी सहन नहीं कर सके थे। पर इसीलिए क्रान्तिकारीगण भी उनके साथ झगड़ना नहीं चाहते थे, उन्हें कार्य करना था, न कि मतभेद।

श्री० राममनोहर लोहियाने ६ अगस्तको इस आन्दोलनके बारेमें एक वक्तव्य प्रकट किया था, जिसमें उपर्युक्त स्थितिका स्पष्टीकरण है उन्होंने

बताया कि—"यदि गांधीजी हमारे क्रांतिकारी आन्दोलनकी निंदा करते हैं तो हम उनसे झगड़ने न बठेंगे। यद्यपि मुझे कई बार, उनसे, और कांग्रेस की कार्य समितिसे झगड़नेकी इच्छा होती हैं, पर यह बात मुझे न्याय युक्त मालूम नहीं होती। कार्य समिति कुछ यह सिद्ध करना नहीं चाहती कि गांधाजी का यह विरोध सार्वजनिक हित या उन्नतिके लिए है, और हम भी कार्य-समितिको इसके लिए दोष नहीं दे सकते। समिति यह कहता है कि जो लोग इस प्रकारकी क्रांतिका विरोध कर रहे हैं, वे पचीस वर्षोंसे कॉंग्रेसके लिए अनथ परिश्रम कर रहे हैं, और कई तरहके बलिदान किये हैं हम भी यही चाहते हैं कि ये नेतागण अपने अनुभवों और बुद्धिके बलपर हम राजनैतिक क्षेत्रम पथ निदश करें, किन्तु हम अपनी क्रांतिकारी कारवाईयोंके लिए उन्हें जवाबदार नहीं मानते।

क्रांतिदलके एक दूसरे नेता श्री० जयप्रकाश नारायणने भी आज़ादीके सैनिकोंके नाम एक खुले पत्रमें यह बताया था कि क्रांतिदल किस तरह उत्तरोत्तर बढ़ता गया उन्होंने लिखा कि—

"पहले तो राष्ट्रवादी क्रांतिकारियोंकी ऐसी कोई खास संस्था ही नहीं था कि जो लोगोंको आन्दोलनके सम्बन्धमें कोई निदश करे कॉंग्रेसको भी यह ठीक मालूम न था कि यह आन्दोलन इतना विशाल रूप धारण करेगा।

धीरे धीरे क्रान्तिका क्षेत्र इतना विशाल हो गया कि बड़े बड़े राष्ट्रीय नेतागण और विचारक भी आश्चर्यमें पड़ गये। उन्हें यह भी लगा कि यह ठीक था। जब उनका ध्येय आज़ादी था तब उसमें गलत था ही क्या? हम जानते हैं कि साधारणतया सभी कॉंग्रेसी स्वदेशाभिमानी होते है, और उसी भावनासे वे कॉंग्रेसमें सम्मिलित भी होते हैं, और किसी भी देशके कार्यके लिए उन्हें कष्टोंका सामना भी करना पड़ता है और वही उसे राष्ट्रवादी बना देता है। उसे किसी राजनैतिक आदर्शका दिग्दर्शन नहीं मिलता, उसका समय अधिकांशमें राष्ट्रीय समाचारपत्र पढ़नेमें ही व्यतीत होता है, किन्तु उसका निर्माण तो कडुए अनुभवों और यातनाओंके बीच ही होता है। ऐसे कार्यकर्त्ताओंने ही क्रांति-दलकी रचना की है और क्रांतिके वेगको प्रबल बनाया है।

जनता को इन्हीं नये कार्यकर्त्ताओंने आंदोलन का निर्देश किया और सूचनाएं दी। श्री० जयप्रकाश नारायण ने आजादी के सैनिकों को लिखे हुए एक दूसरे पत्र में भी लिखा कि—

'कुछ महीनों पहले गांधी जी और वायसराय में जो पत्र व्यवहार हुआ है उससे एक विषम समस्या उत्पन्न हो गई है। लोग हिंसा और अहिंसाके बीच भूल रहे हैं। मुझे लगता है कि ऐसे अवसर पर हिंसा और अहिंसा की बात करना निरर्थक है। आजादी का प्रत्येक सैनिक जो उसे ठीक लगे वह करने के लिए स्वतन्त्र है जिसे दूसरे मार्ग पर चलना हो वे वैसा कर सकते हैं उन्हें सिर्फ यही देखना है कि वे एक दूसरे से टकरा न जाय। और जहां कार्यसिद्धि का प्रश्न 'करो या मरो' पर निर्भर करता है वहां तो फिर टकरार का प्रश्न ही नहीं रहता।'

क्रांतिकारियों ने ता० ६ अगस्त को देश में एक सामूहिक हड़ताल करने की घोषणा की। मजदूरों से निवेदन किया गया कि वे कामधन्धे और वाहन-व्यवहार में मदद न दें किन्तु कम्युनिस्टों ने उसका अनुमोदन न किया, फिर भी परिणाम ठीक ही निकला। ए आई सी सी ने भारतीय मजदूरों से साधिकार जो निवेदन किया था, वह निम्नलिखित था— शायद आप मजदूरों को कम्युनिस्ट यह समझाते होंगे कि इस सामूहिक हड़ताल से मित्र राष्ट्रों की युद्ध व्यवस्था में खलल पड़ेगा किन्तु तब हमारे सँरक्षण का क्या होगा? इंग्लैंड हमारे सँरक्षण का प्रयत्न तो पहले से ही तोड़ चुका है और उसके इस कार्य में मित्रराष्ट्र उसे मदद भी करते रहे हैं। क्रांति समय की प्रतीक्षा करके बैठा नहीं रहती। आपने जिस तरह काम धंदा बंद करके कारखानों को तिलांजलि दी है उसके लिए हम आप का अभिनन्दन करते हैं। यदि आपने इसी तरह क्रांति आंदोलन में मदद दी तो अंत में हम विजयी होंगे।'

अगस्त १९४२ के बाद के दिन बहुत मुश्किल के थे। देश में अव्यवस्था और अन्न संकट की परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी। अक्टूबर महीनेमें सरकार युद्ध में व्यस्त होने के कारण यह सब जानते हुए भी उसके निराकरण की व्यवस्था न कर सकी।

वह ऐसी परिस्थिति थी जब सभी भारतीय ब्रिटिश सरकार पर कुपित थे, और समाज की स्थिति भी ऐसी ही थी कि एक व्यक्ति दूसरे को हड़पने की सोच रहा था, क्योंकि 'काले बाजार' का प्रभाव बहुत बढ़ गया था। हर कोई धनवान होना चाहता था। शिक्षित वर्ग ने तीसरा ही मार्ग पकड़ा इधर कांग्रेस आंदोलन में मदद देना और उधर भीतर ही भीतर 'काला बाजार' करके धन कमाना। उनके हिसाब से पुरानी दुनिया नष्ट हो चुकी थी और साथ ही साथ राजनीति और सरकार भी। उनके लिए एक नया संसार पैदा हुआ था, जिसमें उनका अधिकार था और जो चाहे सो कर सकते थे। हमारे लिए इससे बढ़कर शर्म की और कोई बात नहीं, और यह लिखना भी इससे कम लज्जाजनक नहीं है। प्रत्येक घर में व्यक्तियों का परस्पर द्वन्द्व चल रहा था, और प्रत्येक व्यक्ति को किसी बात का लोभ था। किसी का कोई सम्बन्धी अधिक रिश्वत देकर माल न ले जाए, इसकी फिक्र उन्हें हमेशा घेरे रहती थी। कोई अपरिचित लक्ष्मीपति किसानों को लोभ देकर अनाज भंडार में न भर ले इसकी भी उन्हें कम चिन्ता न थी।'

'क्रान्तिकारियों को आगे कदम बढ़ाना चाहिए' इस शीर्षक के एक आदेश पत्र में डॉ० राममनोहर लोहिया ने इस परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा था कि—'गरीब जनता यह न समझे कि अनाज के संग्रह और नफाखोरी के लिए सिर्फ सरकार ही जिम्मेदार है। बहुत से 'सभ्य' कहे जाने वाले लोग, जो अपने को कांग्रेसी बताते हैं वे भी इन कामों से अछूते नहीं हैं, क्योंकि उन्हें भी युद्ध के पर्दे के पीछे नफा कमा कर धनवान बनना है।'

इस तरह के 'काल-बाजारों' से जब जनता पिस रही था, तो उधर जापान के आक्रमण का अंदेशा भी बढ़ता जा रहा था। 'इन्किलाब' नामक मासिक पत्र में एक लेख लिख कर श्री० अच्युत पटवर्धन ने पहले से ही जापानी आक्रमण की सूचना दे दी थी। इस 'इन्किलाब' मासिक के सम्पादक-गण श्रीमती अरुणा और डॉ० राममनोहर लोहिया थे। श्री अच्युत पटवर्धन ने लिखा था कि—'हम में से साधारण से साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति

बंगाल और अन्य प्रांतों में आंदोलन का असर



१९४२ के जन आंदोलन में जनता ने बंगाल तथा दूसरे प्रांतों में कैसे और क्या क्या किया, और क्या तकलीफें उठाईं इन सब बातों का विवरण अभी तक सरकारी प्रतिबंधोंके कारण मालूम न हो सका है। फिर भी अभी अभी जब गांधीजी बंगाल के दौरे पर गये थे तब उनके साथ वाले एक व्यक्ति ने वहां की हीनदशा का कुछ वर्णन अपने परिभ्रमण में किया है। वे लिखते हैं कि—

हुगली से निकलनेके बाद गांधीजी के साथ हम सब डायमंडहार्बर पहुँचे। गांधीजीने वहाँकी शांतिका पूरा उपभोग किया। जब डायमंड हार्बरमें उतरे तब उन्होंने अभ्यासानुसार दोपहरका नियमित विश्राम किया। नदीका किनारा, लोगोंकी भीड़से ठसाठस भर गया था। वे सब लोग आसपासके गाँवोंसे आये थे, और गांधीजीका भाषण सुननेके लिए सभाके मैदानमें इकट्ठे हो गये। वहीं सान्ध्य प्रार्थना करनेके बाद हम लोगोंने डायमंड हार्बर छोड़ा, और नदीके उस पार जा पहुंचे, उसके बाद हम छोटे छोटे बोटोंमें बैठ, जो हम हमारी महिषादलकी मंजिलको पहुँचानेवाले थे। नदी और नहरके किनारोंपर लोगोंके झुण्डके झुण्ड खड़े थे।

किन्तु हमें इस प्रदेशमें कहीं भी आवाज या नारे सुनाई नहीं दिये, सान्ध्य प्रार्थनामें प्रति दिन आस पासके २५ ३० मीलके क्षेत्रसे लोग आ आ कर ५० ६० हजारकी संख्यामें एकत्रित होते थे, फिर भी हमने यहाँ कहीं भी अशान्ति नहीं देखी, इससे यह सिद्ध होता था कि स्थानीय नेतागण जनतापर कितना अधिकार रखते थे। जहाँ ऐसा न होकर लोग अपनी मर्जी के मुताबिक हो-हल्ला करें वहाँ दिखानेके लिए भी वे नेताओंके हुक्म नहीं मानते। यहाँके प्रभावशाली कार्यकर्तागण कांग्रेसके सिद्धान्तोंका भली भांति प्रचार करते थे, और इसीलिए यहाँकी जनता उनके अधिकारमें थी। हमसे

दा गया था कि यहाँके नेतागण शान्त कार्यकर्ता होनेके कारण, बाहरकी नियामें प्रसिद्ध न थे। व कार्यकर्तागण दिखावा या प्रोपेगेंडा दूर रहना हते थे। मिदनापुर यदि इस दृष्टिसे सर्वोत्तम गिना जाता तो यह सब उनके र्योंका ही परिणाम था।

१६४२में यदि ब्रिटिश सेनापीछे हट जाय और जापानियोंसे मुकाबला ना पड़े तो उन्होंने पहिलेसे ही इसके लिए अपना विस्तृत कार्यक्रम बना या था, किन्तु सरकारने जबरदस्ती इन लोगोंके पाससे मोटर-लारियाँ, ट और साइकल छीन लीं, जिससे ये वाहन जापानियोंके हाथोंमें न पड़ें। स एकाएक कारवाईसे ऐसा मालूम होता था कि जापानी अब किसी भी ण यहाँ आ सकते हैं। इतना ही नहीं यहाँके सरकारी व्यवस्थापक भी नताको उसके भाग्यपर छोड़कर भाग खड़े हुए थे। इसलिए जनताने स्वयं पनी रक्षाके लिए तैयारियाँ प्रारम्भ कीं। उसने एक महीनेकी अवधिमें ३००० करीब स्वयंसेवक तैयार किये, कुछ ही दिनोंमें यह संख्या बढ़कर ५००० ई जिसमें कई महिलायें भी थीं।

तब रुपये पैसे, चाँवल और दाल इकट्ठे किये गये लोगोंको निर्भय बनने प्रोत्साहन दिया गया और उन्हें बताया गया कि अत्याचारके वक्त वे पने रक्षा साधनोंपर निर्भर करें। इस तरह पूरे विभागको व्यवस्थापूर्वक तालीम गई। ये लोग बहुत ही अनुशासनबद्ध और शान्त थे। क्या यह बात आश्चर्यजनक नहीं है?

ये नेतागण सिर्फ भाषण करनेवाले ही नहीं हैं चुनावके वक्त उनका समय धर उधर प्रवासमें ही गुजरता है और वक्त बीत जानेपर वे फिर जनतामेंसे दृश्य हो जाते हैं। उन्होंने जनताके साथ जाकर कठिनसे कठिन काम किये थे। व्यवस्था, लूट, और अत्याचारोंने इस भूमिको छिन्न भिन्न कर दिया था। हुतसे लोग ने घर-बारके हो गये थे और यह जो कुछ अधूरा था उसे पूरा रनेके लिए अकालका राक्षस आ पहुँचा और बहुतसे व्यक्ति भूख और तक- लीफोंसे तड़प तड़प कर मर गये। थोड़ेसे कांग्रेसी कार्यकर्तागण जो जेलोंसे बाहर रह गये थे, के साथ यहाँके बहुतसे परिचितोंने इकट्ठे होकर दुखियोंकी

मदद करना प्रारम्भ किया, और इसी सिलसिलेमें एक 'रक्षा-समिति' बनाई। इस 'रक्षा समिति' के अन्तर्गत ६ रक्षा-शिविर, ६ सस्ते अनाजकी दूकानें, १५ शारीरिक रक्षा और चिकित्सा केन्द्र, ४ मुफ्त दूधकी दूकानें १२ खेतोंके लिए बीज बाँटनेके केन्द्र, ४ चावल की सफाईकी कलें, १ तेल निकालनेका केन्द्र, और तीन खादी केन्द्र खोले गये थे। इन केन्द्रोंके द्वारा जनतामें चाँवल, कपड़ा, दवाइयाँ, और दूसरी आवश्यक वस्तुओंका वितरण किया गया जिसकी कीमतका अन्दाज लगभग १,५८०००) तक किया जाता है।

सरकारकी लापरवाही और अव्यवस्थाको मिटानेके लिए हमारे नेताओं ने जिस साहस अथक परिश्रम और अपूर्व शक्तिसे लोगोंका सगठन किया यह कहानी राष्ट्र प्रेमके रगोंसे रँगी हुई है। उसने जिस तरह जर्मन सितम गरोंका मुकाबला किया हम उसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करते हैं, किन्तु संकट के समय इस प्रान्तके लोगोंने जो कुछ भी किया वह उससे किसी भी हालत में कम नहीं है। उन्होंने सच्चे अर्थोंमें राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना की थी, और एक सर्वोच्च समिति भी बनाई थी जिसने कॉंग्रेसके शासनमें रहकर कार्य किये। एक सर्वोच्च अधिकारी भी चुना गया जिसकी मददके लिए दूसरे मन्त्रियोंको नियुक्त किया गया, जिनका काम कानून, व्यवस्था, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, न्याय, खेती और उपचारके सब काम सम्हालना था उनके ही आधीन अपना पोस्ट विभाग भी था। तोड़फोड़ करनेवालों, चोरों और लुटेरोंको पकड़ा जाता था और कानूनके अनुसार उनका न्याय किया जाता था।

इसके साथ ही साथ स्वयंसेवकोंकी एक सेना बनाई गई थी, जिसमें एक सर्वोच्च अफसर और एक सेनापतिकी नियुक्ति की गई। सेनामें भी बहुत से विभाग थे जैसे युद्ध विभाग, पुलिस विभाग वगैरह। एक एम्ब्यूलेंस भी बनाई गई, जिसके अन्तर्गत कुछ अनुभवी डॉक्टर, कम्पाउण्डर, मजदूर और नर्सें थीं।

इस संस्थाको एक वक्तव्यके द्वारा श्रद्धाञ्जलि देते हुए सरकारने बताया है कि—"१९४२-४३ के अन्तर्गत जो तोड़ फोड़की घटनाऐं हुईं उनकी बहुत-सी बातें जानने लायक हैं। बगाल प्रान्तके मिदनापुरमें डाकुओं और

लुटेरोंको बहुत होशियारीसे पकड़ा गया था। उनके बारेमें जानकारी विविध सूचनाएँ देनेका ढंग निकाला गया, और उपर्युक्त तरीकासे उन लुटेरोंकी कार्यवाहियोंको गुप्त रूपसे मालूम किया जाता था। लुटेरोंके मुकाबलेमें जा दस्ते जाते थे उनके साथ हमेशा डाक्टरों और दवाकी टुकड़ी भी जाती थी इस प्रकार वहाँका गुप्त पुलीस (C I D) विभाग महत्वपूर्ण कार्य करता था।

इस राष्ट्रीय सरकारने १७ दिसम्बर १९४२ से ८ अगस्त १९४४ तक राज्य किया। महात्मा गाँधी द्वारा २६ जुलाई और ६ अगस्त १९४४ को जो वक्तव्य नेताओंको शरण जानेके लिए अखबारोंमें प्रकाशन किया गया था उसके फलस्वरूप ८ वीं अगस्त को इस राष्ट्रीय सरकारका काम बन्द कर दिया गया था। इस अर्सेमें दुश्मनने सरकारी विभागका सन्देह करके बार बार इस राष्ट्रीय सरकारपर हमला किया जिससे वह जो कुछ भी व्यवस्था करती थी वह नष्ट हो जाती थी। इन सब घटनाओंका विवरण जब गाँधीजीने सुना तब उन्हें बहुत दुःख हुआ, उन्होंने कहा हमारी राष्ट्रीय सरकारको दूसरोंकी तरह न होकर अहिंसक ही होना चाहिए।

बगालके अन्य स्थानोंको छोड़कर हमने इसी प्रदेशमें आना ज्यादा पसन्द क्यों किया? इसका जवाब यही है कि इसी प्रदेशने सबसे अधिक पुलिस और सैनिकोंके जुल्म, आग, हमला और अदालती भयकर यातनाएँ सहन की हैं इन लोगोंके कष्टोंसे महात्माजीको बहुत दुःख हुआ था, और खास तौरपर यहाँकी जनताको आश्वासन देनेके लिए ही वे यहाँ आये थे। हमारी ठहरनेकी अवधिमें हम आसपासके गाँवोंमें भी घूमे थे बहुतसे गाँवोंपर तो पुलिस द्वारा बार बार हमले किये गये थे वहाँके लोगोंने भयकर अत्याचारोंका सामना किया था। किन्तु इन लोगोंने उन जुल्मोंके सामने सिर झुकानेके बदले आत्मश्रद्धा और हिम्मतसे काम लिया, उस वक्त उनमें विदेशी सरकारको जड़से उखाड़ फेंकनेकी नवीन भावना जागृत हुई थी। उस वक्त वे खुले मन और खुले मैदानके वासी थे, किसीकी भी हुकूमत उस वक्त के सहन न कर सकते थे।

दिया वह अपूर्व था। मिदनापुर जिलेके कोन्टाई सब-डिव्हीजनका प्रमुख नगर कोन्टाई है। यह जिला बंगालके नैऋत्य भागमें है, जिसका एक भाग हुगली नदीके किनारेपर बसा हुआ है, और शेष भाग बंगालकी खाडीके किनारे हैं। इस प्रदेशमें नहरोंका जाल सा बिछा हुआ है, और उसका उपयोग खास रास्तेके तौर पर होता है।

१९४२ के अगस्त आन्दोलनके समय नेताओंकी गिरफ्तारीके बाद, तो ऐसा मालूम हुआ कि मानो इस आन्दोलनका कुछ परिणाम ही नहीं निकला। किन्तु यह शांति तो वह शांति थी, जो तूफानके पहले होती है। अन्तमें सितम्बरकी २६ तारीखको एकाएक अशांति फूट पडी। पुलिस-चौकियों पोस्ट आफिसों, स्कूलों और सरकारी मकानोंमें आग लगानेकी प्रवृत्तियाँ शुरू हुई, साथ ही साथ टेलीफोनके तार काटने, सरकारी चीजोंको नष्ट करने इत्यादि का आन्दोलन भी एकाएक चल पड़ा। तब सरकारी अधिकारी भी अपनी सुध खो बैठे और पुलिस तथा सैनिकोंको उनकी मर्जीके मुताबिक गाँव जलाने, लूट खसोट करने, स्त्रियोंपर अत्याचार करने और अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलाने की सम्मति दी, और इस तरह लोग उस तूफानके चक्करमें पड़कर दोनों ओरसे दुखी हुए।

एक बार रातको भोजन करके, मिदनापुर कांग्रेस कमेटीके उप मन्त्री श्री त्रिलोकनाथ प्रधानने, जो वकील हैं, मुझे जो कुछ कहा वह मैं यहाँ बताता हूँ।

वे अपने भाई स्त्रीबच्चोंके साथ पासके ही एक गाँवमें रहते थे, उनके परिवारमें २८ प्राणी थे। २९ सितम्बरको जो आन्दोलन शुरू हुआ उसके दमनके लिए फौजके लोगोंको वहाँ बुलाया गया, उन्हें अलग अलग जगहों पर नियुक्त करके, उनसे कहा गया कि वे आसपासके गाँवोंमें आतंक फैलाएँ। सुबह आठ बजे वे अपने स्थानोंसे निकलते और लूट खसोट मचाते हुए, झोंपड़ोंको जलाते और स्त्रियों पर अत्याचार करते हुए शामको चार बजे वापस अपनी जगहपर लौटते थे। यह सब अक्टूबर के पहले सप्ताहसे शुरू हुआ, उनकी इस कार्रवाइसे लोग इतने भयभीत हो गये थे कि दूसरे सप्ताह

में तो अधिकांश ग्रामवासी गाँव छोड़ छोड़कर नगरों में चले गये थे। उनमें से भी दो-तीन आदमियोंको छोड़कर शेष सभी घर छोड़कर चले गये। ये लोग समुद्र किनारेसे कुछ दूर मैदानमें जाकर रहने लगे, जहाँ न तो घर थे, न छप्पर ही, इसलिए उन सबको खुले आकाशके नीचे रहना पड़ा। उनमें देखभाल करनेवाले पुरुषोंको छोड़कर बाकी सब स्त्रियाँ और बच्चे ही थे।

१६ अक्टूबरको सुबह ११ बजे समुद्रमें एक भयंकर ज्वार आया, और उसकी पकड़में आकर बहुत सी चीजें जमीन समान हो गई। ज्वारकी लहरें चालीस फीट ऊँची थीं, और सारी दीवारकी तरह ऐसी भयंकर मालूम होती थीं कि उस दृश्यकी भीषणताको देखकर ही बहुतसे लोगोंके हृदय बैठ गये। समुद्रके नजदीक जो लोग थे, वे सब मौतके मुँहमें चले गये। कुछको छोड़कर गाँवके सभी ढोर और मनुष्य समुद्रके पेटमें समा गये।

उनकी वृद्ध चाचीको चटाईपर बैठाते ही पाँच मील तक घसीटकर ले जाना पड़ा और उनकी बारह सालकी लड़की और नौ सालके लड़केके साथ घरके दूसरे व्यक्ति झाड़ोंपर चढ़ गये। जो कुछ छोटी मोटी फूसकी झोंपड़ियाँ थीं वे ज्वारके आवेगमें करीब करीब टूट चुकी थीं। वे सब बारह घण्टे तक झाड़की टहनियोंसे ही चिपके रहे, तब कहीं जाकर दूसरे रोज नीचे उतर पाये। उनके गाँवके भी सभी मकान नष्ट हो चुके थे, और कुटुम्बमें वे और उनकी पुत्रीके साथ पाँच ही व्यक्ति बच पाये थे।

उस वक्त मोटर लारियोंकी भी बड़ी कठिनाई थी। जापानके डरके कारण सरकारने एकको छोड़कर बाकी सब लारियाँ बाहर भेज दी थीं। सिर्फ एक डाककी लारी थी, जिसमें हुक्मके बगैर कोई भी यात्रा नहीं कर सकता था और गैर सरकारी व्यक्तियोंके लिए उसमें बैठनेकी आज्ञा प्राप्त करना असंभव था। उस वक्त प्रांतीय सरकारने अनाज और मिट्टीके तेलका जहाज भेजनेकी व्यवस्था की थी, किन्तु सब डिविजनल अफसरने अनाज वगैरहके जहाजोंको उस क्षेत्रमें ले जानेका निषेध कर दिया। वे, जबतक क्रांतिकारी लोग अपने आंदोलनोंके लिए पछता कर क्षमा न माँग लें।

तक उन्हें भूखा मारना चाहते थे, वे उन्हें जरा भी व्यक्तिगत या सरकारी मदद करनेके खिलाफ थे। अन्तमें सचमुच ही मददका समय आया तो उन्होंने खास खास कर्मचारियोंको यह सूचनाएँ दी कि दिनमें तो उन्हें मदद करें और रातमें छापा मार कर उसे वापस लूट लें।

यह नीति कुछ ऐसी विचित्र थी कि स्वयं स्पेशल अफ़सरने इसका विरोध किया। तब श्री० त्रिलोकनाथ खुद जाकर अर्थमन्त्री श्री० श्यामाप्रसाद मुखर्जीसे मिले, उन्हें सब बातें बताईं और उन्हें तथा स्थानीय स्वराज्य विभागके मन्त्री श्री० सन्तोषकुमार बसुको कोन्टईमें ले आये। उनके जरिये उन्होंने वायसरायके पास एक विशेष वक्तव्य भेजा। अन्तमें उनके प्रयत्न सफल हुए, उन लोगोंको गिरफ्तार किया गया, और मन्त्रियोंके विदा हो जानेके बाद डिस्ट्रिक्ट मॅजिस्ट्रेटने उन्हें जेलमें बंद किया।

हम जबुसन गाँवको देखनेके लिये गये, यह गाँव कोन्टईसे दो मीलसे भी कम पड़ता है। यहाँकी १७६ की बस्तीमेंसे ८२ व्यक्ति समुद्रके ज्वारमें, और ५१ महामारी और अकालके कारण मौतके मुँहमें समा गये। ४४ कुटुम्बोंमेंसे १८ कुटुम्ब साफ़ हो गये और प्राकृतिक और मानुषी कोपके कारण सभी घर-बार नष्ट हो गये। पहले वहाँ ६ बोटें थीं, किन्तु १९४२ के प्रारम्भमें ही सरकारने उन सबको वहाँसे हटा लिया। एक आदमीने अपनी बोटको कुछ दिन पानीमें डुबी रखकर बचा ली थी, और आन्दोलनके वक्त उसने इस बोटके द्वारा कई जानें बचाईं। कोन्टईकी पहली यात्रामें ही पुलिसने उस बोटको देखा और जब्त कर लिया, जिसके फलस्वरूप फिर अधिक जानें बचाई न जा सकीं। एक सप्ताह तक सारा गाँव पानीके नीचे रहा सब पानी खारा हो जानेके कारण बोटके द्वारा कोन्टईसे पानी लाया जाता था, और अभी भी लोगोंके लिए पीनेका पानी कोन्टईसे ही लाया जाता है। सरकारने ३००० खर्चसे एक ट्यूबवेल डलवाया है, क्योंकि कण्ट्रॅक्टरने जिस लोहेका उपयोग किया था वह 'गेल्वेनाइज्ड' न होनेसे पानी लाल होता है, जो पिया नहीं जा सकता। जब लोगोंने अपनी मुसीबतकी कहानी कही तब सचमुच उनकी आँखोंसे आँसू बह रहे थे। छः महीनोंसे गाँवमें मलेरियाका भी प्रकोप था।

यह सब हमने लोगोंके मुँहसे सुना है और देखा है। हाल कहा गया है,—उस वक्त वहाँ वेधशाला और मसुलीपिटम आक्साईने तूफानकी चेतावनी दे दी थी, किन्तु अफसरोंने इस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। तूफानकी शुरुआत १६ अक्टूबरको बड़े सवेरे हुई और उसके कुछ ही घण्टों बाद वह भीषण ज्वार आया। २०० मीलके लेपरावाला समुद्र किनारा समुद्रका ही एक हिस्सा बन गया, और उसमें रहनेवाले स्त्री पुरुष, बच्चे और ढोर थे वे सबके सब विलीन हो गये, इस घटनाके पर समाचार करीब एक सप्ताह तक दबाये गये थे।

सब डिवीजनके ८२ सर्वोंमेंसे ८७ सर्वोंकी ओरसे जो समाचार प्राप्त हुए उनसे मालूम होता है कि इस प्रदेशमें आन्दोलन और समुद्री तूफानके परिणामस्वरूप ६६३७१ मनुष्योंकी बस्तीमेंसे १०१३६ व्यक्ति मर चुके थे। मुर्दोंके पड़े रहनेसे सब पानी खराब हो गया जिससे हैजा, मलेरिया वगैरह बीमारियाँ पैदा हुईं।

मई, जून और जुलाईमें परिस्थिति अत्यधिक गम्भीर थी, उस वक्त आसपासके कई गाँवोंसे भूखे और फटेहाल लोग कोन्टइ आये, जिनमें से बहुतसे तो रास्तेमें ही मर गये, क्योंकि उन्हें किसीका जरा भी सहारा न मिल सका था, उन्होंने खुली धरती और तख्तोंपर रातें गुजारी थीं। भयङ्कर वर्षामें वे भीगते हुए आते और कभी कभी रास्तेमें भूखे जंगली भेड़ और कुत्ते उन्हें जीवित ही खा जाते थे। अकालके समयमें बहुतसे लोगोंने कई कीमती चीजें प्रायः मुफ्तमें ही बेच डाली।

यह सब कोन्टईकी संक्षिप्त हकीकत है। गाधीजीकी सायं प्रार्थनाके वक्त उनका प्रार्थना स्थल जीवित लाशोंसे पट जाता था उन लोगोंके दुःखी हृदय मानों कह रहे थे कि जब तक हम लोग वर्तमान सरकारके आधीन रहेंगे, तब तक हम लोगोंकी हालत कदापि नहीं सुधर सकती। उन्हें सल्तनत टिकी रहने देनेके लिए भूखों मरना चाहिए। इस दुःखपूर्ण वातावरणका अंत लानेके लिए एक ही उपाय है वह है उनकी अपनी राष्ट्रीय सरकार। इसलिए गाधीजी रोज स्वराज्यकी बातें करते थे, जिससे कि जनता स्वयं अपनी शासक बन सके।

उन्होंने रचनात्मक कार्यक्रमके द्वारा जनताको अनुशासन युक्त और शक्तिशाली बननेकी बात बताई।

× × ×

चिटगाँगके बारेमें थोड़ा बहुत भी लिखे बिना हम यह नहीं कह सकते कि हमने बंगालमें जाकर क्या देखा और क्या सुना? यद्यपि हम वहाँ नहीं गये किन्तु वहाँकी महिलाने गांधीजीसे मुलाकातकी और उन्हें बताया कि १९४२ और उसके बादके आन्दोलनके वक्त क्या क्या हुआ? चिटगाँग, युद्ध प्रदेश होनेके कारण, वहाँके समाचारों पर सख्त प्रतिबन्ध था, वे किसी भी तरह बाहर नहीं जा सकते थे।

चिटगाँग बंगालके सुदूर पूर्वकी ओर बर्माकी सीमासे लगा हुआ है उसके पूर्व और दक्षिणकी ओर ऊँचे ऊँचे पर्वत हैं, जो कि उसे बर्मासे अलग करते हैं।

चिटगाँगकी पश्चिम और दक्षिण दिशाकी ओर समुद्र है, सिर्फ उत्तर दिशाकी जमीनकी ही वजहसे वहाँका सम्बन्ध शेष भारतसे है जहाँ कि रेलवे मार्ग बना हुआ है। वहाँकी प्राकृतिक रचना ऐसी है जिससे वह बर्मा और भारत दोनोंसे मिला हुआ है। अभी अभी जो युद्ध समाप्त हुआ उसमें चिटगाँगका महत्वपूर्ण स्थान था। यह प्रदेश पहाड़ियों और जंगलोंसे घिरा होनेके कारण यहाँ इतना अनाज नहीं होता कि उस प्रदेशको काफी हो। युद्ध पूर्वके समय वहाँके निवासी बर्माके चाँवल और बिहार वगैरहकी दाल पर निर्भर करते थे। वहाँ जो अनाज पैदा हो सकता था वह प्रकृति पर निर्भर था क्योंकि वहाँ नहर की पद्धति नहीं है। इसलिए वे किसान जिनके पास जमीन नहीं थी, मजदूरी करनेके लिए बर्मा चले गये और वहाँ अपना जीवन निर्वाह करने लगे। बहुतसे व्यापारी और सरकारी नौकर वर्षमें खास मौसमके वक्त बर्मामें रहते और बाकी समय चिटगाँगमें गुजारते थे।

इस तरह ऐसे कई सबब थे जिससे कि चिटगाँवके निवासियोंका सम्बन्ध अधिकतर बर्मासे ही था, और उसे ही वे अपना देश या घर मानते थे।

१९३० के सविनय अवज्ञा आन्दोलनके वक्त चिटगाँवमें जो सशस्त्र प्रयोग हुआ था तब से वहाँके निवासी सरकारकी नजरोंमें खटक रहे थे। यह शहर

सरकारकी दृष्टिमें बंगालका प्रमुख क्रान्तिकारी शहर गिना जाने लगा। उ
दोलनमें वहाँ बहुतसे युवकोंने अपने प्राण गवाए और बहुतोंको जेल
दिया गया।

इसके बाद पुलिसने यहाँका सम्बन्ध शेष भारतसे बिलकुल तो
और जो सत्याग्रह शेष भारतमें होते रहे उनका पर्याप्त प्रभाव इस
न पड़ सका।

१९४१ के अन्तमें जापानियोंने बमवर्षा करके रंगूनको तहस नह
दिया, चिटगांवके निवासी जो रंगून या बर्माके दूसरे प्रदेशोंमें थे उन्हें उ
भागकर जंगलों या पहाड़ियोंकी शरण लेनी पड़ी। उनमेंसे हजारों ता
और प्राकृतिक प्रकोपसे मर गये। कुछ समय तक तो जहाजोंने रंगूनके
फिरोंको भारत पहुँचाया किन्तु जैसे ही उनका आगमन बंद हुआ तो
चिटगांव ही नहीं भारतके अन्य प्रदेशोंके निवासी भी भाग भाग कर उ
मार्गोंकी शरण लेने लगे। वे कहाँ जा रहे थे और क्या कर रहे थे यह
समय वे खुद ही नहीं जानते थे वे तो सिर्फ यही जानते थे कि उन्हें किसी
भारत पहुँचना है।

उस तूफानमें सब समान थे जो लोग किसी दिन लखपति थे वे उस
चीजें उठा उठाकर नंगे पैरों बीमारी और तकलीफें सहते हुए भागे जा र
उनमेंसे बहुतसे तो इतने दुर्बल हो गये कि मौतसे बचनेका उनके पास कोई स
ही न था, जगह जगह रास्तेमें उनके मुँह दुबकाए हुए मनुष्योंका
पड़े थे।

वह बर्मा, जहाँसे चिटगाँवके निवासियोंका मुख्य भोजन चावल आता
एकाएक सम्बन्ध टूट गया। अब चिटगाँवकी थोड़ीसी उपजपर ही व
लाखों निवासियोंका जीवन निर्भर था जिससे परिस्थिति अत्यन्त भीषण हो ग
और उसकी भीषणताको बढ़ानेके लिए युद्ध मोर्चेके सैनिकोंकी छावनी भी
आगई थी, जिसका उदर पोषण भी उसी अनाज पर निर्भर था
बर्मासे भागकर आये हुए लोग अपने साथ कई बातें भी लाते थे जि
उनपर गुजरी हुई विपत्तियाँ, बम वर्षासे घरोंके नष्ट होनेकी, डाकुओं द्वारा अ
मियोंकी मौत की, लूट ... और स्त्रियोंपर किये गये बलात्कारों

जीवन और जीनेके साधनोंकी रक्षा करनेमें असमर्थ छिन्न भिन्न समाजकी, अंग्रेजोंके कायरतापूर्वक पीछे हटने की, उनकी स्वार्थ नीति और अत्याचारकी प्रवृत्तियों तथा भारतीयोंके प्रति किये गये घोर अनाचारकी लोमहर्षी बातोंका भी समावेश होता था ।

उनकी इन आँखों देखा घटनाओंके चिटगांवमें फैलनेसे वहां के लोगोंमें सनसनी फैल गई, उन्होंने कल्पनाकी कि यदि जापानियोंने बर्मापर अधिकार करके उनपर भी हमला किया होता तो उनकी क्या स्थिति होती ?

यह हो ही रहा था कि सरकारने ता० २१ फरवरी १९४१ को उस प्रदेशके छोटे छोटे गाँवोंको खाली करनेका हुक्म निकाला। उन ग्रामवासियोंके लिए और कहीं भी व्यवस्था न की गई थी, और न उनके जीवन निर्वाहके लिए किसी तरहका ध्यान दिया गया था, और न इतना समय ही दिया गया कि वे कुछ व्यवस्था कर सकें। वे बाहर भी न निकल पाये थे कि सैनिकों के झुण्ड उनके घरोंमें घुसने लगे। वे बेचारे ग्रामवासी जो नासमझ और जड़ थे, जिनकी कई पीढ़ियोंने वहां अपना जीवन बिताया था, एकाएक सड़कपर भटकते हुए भिखारी बना दिये गये उन्हें उनकी भूमिपरसे उखाड़ दिया गया। जो सरकार क्षण मात्रमें सब कुछ छोड़कर भाग सकती है उससे मददकी आशा भी क्या की जा सकती थी ? कई इंजिन सरकारी नौकरोंको भगा ले जानेके लिए तैयार खड़े थे, सरकारकी ओरसे उन लोगोंको किसी भी क्षणमें भाग जानेकी सूचना मिल चुकी थी।

सच्चे समाचारोंको सरकारके द्वारा दबा दिये जानेके कारण, बहुत सी अफवाहें ज्वालाकी तरह फैल रही थीं। कहा जाता था कि कुछ ही दिनोंमें चिटगांवपर हमला होगा, और उसपर जापानियों द्वारा अधिकार कर लिया जाएगा। डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटको सभी अधिकार सौंप दिये गये थे, और समझा जाता था कि चिटगांव फौजके हाथमें सौंप दिया जाएगा, और जरूरत पड़ने पर उसे अनधिकृत शहर भी घोषित किया जा सकता है। १९४२ के मार्च और अप्रेल मासमें अधिकारियोंको चिटगाँवसे हटा लिया गया लोगोंपर भीषण आतङ्क छा गया, अब वे किसकी शरणमें जाएँ ? सरकारने भी उन्हें कहीं का न रखा था। अगर वे चाहते भी तो कहीं भागकर न

जा सकते थे, क्योंकि सरकारने पहलेसे ही मोटर, गाड़ियाँ, मोटर टेक्सियाँ बसें, नाव वगैरह सभी वाहन वहाँसे बाहर भेज दिये थे।

चितगाँग मुख्यतः नदी नालावाला नगर होनेसे नावोंको हटा लेनेसे वहाँके ग्रामवासी तो सचमुच बहुत ही परेशान हो गये थे। अनाजके स्थानपर मछलियाँ पकड़नेके लिए भी नावोंकी जरूरत थी।

जब जापानियोंके हमलेका भय सिरपर सवार हो, देशमें बमोंसे भागे हुए निराश्रितों और सैनिकोंका भयंकर जमघट जमा हो, खराक पाना दुःसह हो, नोटिस पानेपर तत्क्षण गाँवोंको खाली करना पड़े, सरकार भी भाग जानेका निश्चय कर चुकी हो, और भागने जानेके सब साधन छीन लिये गये हों तब यदि लोग विक्षुब्ध और अशान्त हो जायँ तो उनके लिए उन्हें दोष कैसे दिया जा सकता है? उनके लिये तो भाग्यके सब द्वार बन्द हो चुके थे और उसे खोलने या उसमेसे निकलनेका कोई मार्ग ही न था।

तब १९४२के मध्यम अकालके आसार दिखाई देने लगे। हमने पहले ही बता दिया है बर्माके एकाएक पतनसे एक लाखसे ज्यादा मनुष्योंके उदर-पोषणका सवाल पैदा हो गया था और बर्मासे चाँवलका आयात बंद हो जानेसे परिस्थितिकी भीषणता और बढ़ गई थी। उसी वक्त डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटके हुक्मसे चीतगाँगकी दूसरी चीजें जैसे चाँवल, दाल, शक्कर, तेल वगैरह भी बाहर भेज दिया गया, तब परिस्थितिकी भीषणताका पूछना ही क्या?

ता० १० अप्रैल १९४२के दिन मजिस्ट्रेटने नगरके व्यापारियोंकी एक सभा बुलाई और कहा कि—"दुश्मन आगे बढ़ रहा है, अक्याब उसके अधिकारमें चला गया है। चितगाँगपर किसी भी वक्त हमला हो सकता है कलकी प्रतीक्षा नहीं की जा सकती शायद 'कल' आये भी नहीं! अगर आप लोग यहाँसे अनाजको न हटायेंगे तो मैं उसे नष्ट कर दूंगा, क्योंकि मैं उसे दुश्मनके हाथोंमें जाने देना नहीं चाहता।"

इसके बाद सेना-विभागने जितना भी अनाज था सब कच्चे भावोंमें खरीद लिया। सेनाके कॉन्ट्रेक्टरोंने यहाँके मजदूरोंके खिलानेके लिए शारा (छिलकेवाले चाँवल) खरीद लिए।

एक भारतीय अफसरने भारतीयोंको भूखे मरते देख इसका विरोध किया। कहा जाता है, तब एक अंग्रेजने कहा कि 'मच्छरोंकी जानें ज्यादा कीमती हैं। सरकारको इस वक्त सबसे बड़ी चिंता युद्ध सामग्रियाको पूरा करने की है। इस वक्त नागरिकोंकी जरूरतापर ध्यान देनेकी और उनके लिए खुराक वगरह लानेकी व्यवस्था करनेकी सरकारको कोइ गरज नहीं।'

रेल्वे, नहर और सड़कोंके बंद हो जानेके कारण लोगोंको किसी भी तरह दिन निकालने थे। खेतोंका भी बहुत सा हिस्सा सेनाने ले लिया जिससे लोगोंके नुकसान और तकलीफोंमें और वृद्धि हुई, सेनाने जो जमीन ली उसपर मीलों लम्बी नई सड़क बनाई गई और उसमें कमसे कम १०००० एकड़ जमीन जो चॉवलके खेत थे, पुन जोतने लायक न रही। उस वक्त चितगॉगकी चॉवलकी जमीनका आठवॉं हिस्सा बिल्कुल बेकार कर दिया गया था। संघर्षको बढानेके लिए, सरकारकी ओरसे जमीन जब्त करनेकी नीति अमलमें लाई गई, जिसके अनुसार छिलकेवाले चॉवलोंके मौजूदा संग्रहका २/५ वॉ हिस्सा छीन लिया गया। एक ओर जब सैनिक पेट भर भोजन करते थे तो लोग भूखा मर रहे थे, अकालके मारे बेचारे भूखे लोग सैनिकों की जूठनके लिए छावनीके आस पास इकट्ठे हो जाते थे, यह जूठन भी इतनी होती थी जिससे पॉंच लाख आदमियोंका पेट भरा जा सकता था। भारतीय सैनिक तो भूखोंका खानेके लिए देते थे लेकिन उनके गोरे अफसरोंने ऐसा हुक्म जारी किया कि बची हुई जूठन वे जमीनमें गाड़ दें, लोगोंको न दें। उन्होंने सैनिकोंको आदेश दिया कि वे नागरिकोंके साथ सम्बन्ध न रखें। इन गोरोंको इस बातका डर था कि लोगोंसे सम्बन्ध रखनेके कारण उनमें असन्तोष फैलेगा और सेनामें अशांति पैदा होगी।

यह वह समय था जब कि अकालकी ज्वाला वहॉं भभक उठी, अप्रैल और अगस्त १९४२ में चॉवलका भाव तीन रुपये मन हो गया, और १९४३ तक तो वह बढकर ४० रुपये तक पहुँच गया। कई जगह तो लोग पेड़ोंके पत्ते खाते थे। उन्होंने भोजनके लिए अपनी सब सम्पत्ति पहले ही बेच डाली थी। जिनको गावोंके घरोंसे निकाल दिया गया था वे आश्रय खोजते हुए चितगॉगमें आये।

बंगालके अन्य प्रदेशोंकी अपेक्षा चित्तगांव अकालका पहला शिकार था। मनुष्यकृत अकालका सबसे पहला तजुर्बा भारतमें चित्तगांवको ही हुआ। सरकारी विज्ञप्तिके अनुसार १९४३ में चित्तगांवमें भूख और अव्यवस्थाके कारण १०४३७६ से अधिक मृत्यु हुई। उस वक्त प्रवर्तक संघने सेवा की किन्तु इतनी बड़ी विकट परिस्थितिमें एक छोटीसी संस्था क्या कर सकती थी?

अब चित्तगांवमें वहांके निवासियोंकी फिरसे रहनेकी समस्या सबसे बड़ी है, पशुओंका वितरण, हथियार, कर्जे, बीज और जीवन निर्वाहके अन्य साधनोंके साथ चिकित्साकी व्यवस्था, शिक्षाका प्रबन्ध और निराश्रितोंके लिए आसरेकी सबसे बड़ी जरूरत है। इस विषयमें महात्माजीसे सलाह ली गई उन्होंने कहा कि नेताओंको सरकारी मददकी राह नहीं देखनी चाहिए, किन्तु उनके पास इन कामोंके लिए जितने साधन प्राप्य हों उनका उपयोग करना चाहिए। ऐसा करनेसे वे जनताकी दशा तो सुधारेंगे ही किन्तु साथ ही साथ अपनी शक्तिको बढ़ाकर व्यवस्था करना सीखेंगे, और सच्चे स्वराज्यकी भूमिका तैयार करेंगे।

आसामके अन्तर्गत राधापुर गांवमें, जो गोहाटीसे ६ मील दूर है, मैं गया, मेरे साथ एक वकीलभी थे, वे पहले कभी भी राधापुर नहीं आये थे, और न स्थानीय लोगोंसे उनका कुछ परिचय ही था। हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि लोगोंके पास उनकी सब जरूरी चीजें मौजूद थीं, घरोंके आसपास जो जमीन थी उसमें उन्होंने आम केले, नारियल, नागरवेल, सुपारी गोभी, मिर्च वगैरह बो रखी थी। प्रत्येक परिवारके पास अपनी गाय बकरियें और अन्य पशु थे पास ही जो ब्रह्मपुत्र नदी बह रही थी उसमें मछलियाँ भी प्राप्य थीं। मैंने कई गाँववालोंसे बात की उनकी बातोंसे मुझे मालूम हुआ कि उन्हें कभी भी खुराककी तंगी न हुई क्यों कि वे अपने यहाँ उत्पन्न होने वाली चावलोंका निर्यात नहीं करते। सिर्फ कुछ ही ऐसी चीजें थीं जिन पर बाहरसे आनेकी आशा रखी जा सकती थी और जो उन्हें युद्धके वक्त न मिल सकी थीं उनमें खास शक्कर, और मीठा तेल मिट्टीका तैल और नमक थे। शक्कर और मीठा तैल वे खुद बना सकते थे, क्योंकि वे गन्ने और मूंगफलीकी खेती भी करते थे, पर कुछ दिनोंसे उन्होंने इन चीजोंकी खेती बन्द कर रखी थी। प्रत्येक घरमें

रेशम और सूत बुननेके करघे थे। आसाममें रेशम साधारण चीज है, गरीब लोग भी उसे पहनते हैं, क्योंकि वे लोग खुद ही पैदा करते हैं। हाँ उन्हें सूती वस्त्रोंकी कठिनाई होती थी क्योंकि उसमें मीलके सूतकी जरूरत थी, और वह उन्हें बहुत कम मिलता था। अगर वे सूत कातनेकी अपनी पुरानी आदत को कायम रखते तो, यह कठिनाई पैदा ही नहीं होती। गावमें कोई ज्यादा धन वान था अति निर्धन न था और न किसीको आर्थिक कमी या बेकारीका डर ही था। राधापुरसे से एक भी व्यक्ति सेनामें भरती न हुआ था न कोई गोहाटी में काम करनेके लिए मजदूर बनकर ही गया था। यदि हम लोग अपनी जरूरतकी चीज मेहनत करके जमीनसे पैदा कर सकें तो हम दूसरोंकी नौकरी करें ही क्यों ? उन लोगोंका यही सिद्धांत था।

ग्रामीणोंको स्वावलम्बी बनेने, लोगोंको शोषण और भुखमरीसे छुटकारा दिलाने और अपने आपने लिए करनेके गांधीजीके सिद्धान्तोंकी रचनाओंको मैंने यहाँ अलग अलग रूपोंमें देखा। मुझसे यह भी कहा गया कि सारे आसाम प्रांतमें करीब करीब ऐसा ही होता है।

यह गांव करीब करीब १५० से २०० परिवारोंकी बस्ती थी, जिसमेंसे ५० परिवार मुसलमानोंके थे, किन्तु कभी भी उनका हिन्दू परिवारोंसे झगड़ा नहीं हुआ। जब मैंने उन लोगोंसे इस बारेमें पूछा तो एक मुसलमानने जवाब दिया कि—'हम लोग झगड़ा करें ही किसलिए ? आखिर हम सब तो भाई हैं, और एक ही गावमें इकट्ठे होकर काम करते हैं, इकट्ठे रहते हैं। यह स्पष्ट मालूम होता था कि यह स्थान हिन्दु-मुस्लिम झगड़ेके जहरसे मुक्त था, जो जहर गोहाटी और शिलांग जैसे शहरोंमें फैलाया गया था।

वह वक्त चुनावका था, सब ही मोहल्ले और सार्वजनिक स्थान कांग्रेस और मुस्लिम-लीगके पोष्टरोंसे भरे पड़े थे। उस वक्त यह स्पष्ट सा मालूम होता था कि हिन्दू-मुस्लिम झगड़ेका मूल राजनीतिक मतभेद ही है, जिसमें उन लोगोंका भी हाथ था जो जनमतको बहकाकर सरकारी नौकरियां चाहते थे। किन्तु इन बातोंमें जनता बहुत कम रस लेती थी। आसामके दक्षिणी प्रदेश जिला सिलहटके मेमनसिंह गावके मुसलमानोंको बसानेकी जो सरकारी

नीति थी, उससे यह मामला बहुत दिनोंसे चल रहा था, और उस नीतिका प्रारम्भ लगभग १९२५ में हुआ था।

१९३५ में जबसे मुस्लिम-लीगी मन्त्रिमण्डलकी स्थापना हुई, तबसे, यहां पाकिस्तानकी स्थापनाकी प्रवृत्ति चल रही थी। गये चार सालोंमें हजारों मुसलमान परिवारोंको सरकारकी मददसे यहां लाया गया था। ब्रिटिश सरकार एक ओर तो हमें एकत्रित होनेको कहती है और दूसरी ओर जान बूझकर धार्मिक वृत्तियोंकी कमजोरीसे लाभ उठाकर झगड़ेका मूल उत्पन्न करती है। यदि कोई सरकारपर यह आरोप करे कि उसीके द्वारा हममें मतभेद उत्पन्न किया जाता है, और बाहरी दुनियाको यह बताया जाता है कि यदि हिन्दू मुसलमान एक हो जायें तो हम भारत छोड़ देंगे। क्या यह साम्राज्यवादी कूटनीति नहीं है। यद्यपि भाग्य अनुकूल होनेके कारण वे बच न सके थे फिर भी उन्होंने बहुत सी तकलीफ सहीं थीं।

जब उन लोगोंने महात्माजीका स्वागत किया, तब उन्होंने जो आश्वासन दिया उससे उनके दुःखी हृदयको सान्त्वना मिली, और निराशाएं दूर हुईं। उनके लिए यही बहुत कुछ था। महात्माजीने उन्हें कार्यशील बननेकी सलाह दी, और अपने आसपासकी सब बातोंको व्यवस्थित और एकत्रित करनेका आदेश दिया। उन्होंने वहांकी जनताको बताया कि सत्य और अहिंसाका पालन करनेसे सिर्फ स्वराज्य ही नहीं, रामराज्य भी मिलेगा किन्तु उसके लिए उन्हें युद्ध करना होगा। उन्हें निडर और एक होकर यहीं और अभी ही युद्ध करना होगा।

यही उनका सन्देश था, पुराना होते भी नित्य और नया।

अज्ञातवासकी यात्राएँ

अगस्त आन्दोलनमें जो जो घटनाएँ घटित हुईं, उनसे श्री० अरुणा और उनके सहकारी कार्यकर्त्ता अनभिज्ञ न थे, हर एक प्रान्तकी करुण कहानियाँ उनके हृदयमें शूल उत्पन्न करती थीं। अकालके कारण लोग भूखसे मर रहे थे स्त्रियों पर अत्याचार हो रहे थे। अगस्त क्रांतिका प्रादुर्भाव भी गरीबी, भुखमरी, महामारी इत्यादिसे ही हुआ था और यही वह समय था जब अज्ञातवासिनी अरुणाने ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध क्रांति उत्पन्न की।

करीब साढे तीन वर्ष तक अज्ञातवासमें रहकर उन्होंने जो कुछ किया, उसका वर्णन जीवनके विचित्र अनुभवों और रोमांचकारी बातोंसे भरा पड़ा है। उनकी गिरफ्तारीके वारंट निकल चुके थे, कानून और व्यवस्थाके नाम पर सरकारका सी आय डी विभाग उनके पीछे पड़ा था। देशके एक छोरसे दूसरे छोर तक सरकारने अरुणाकी परछाईंके लिए दौड़ दौड़ कर कोशिशें कीं, सरकारकी नजरमें वह परछाईं देशके प्रत्येक भागमें थी, किन्तु काफी प्रयत्नाके बाद भी पकडी नहीं जा सकी।

वे अज्ञातवासी यहाँसे वहाँ घूमते रहते थे, उनकी आँखोंमें चमक थी। जनताके साथ उनका निकट सम्पर्क था, वे उन्हें किसी भी जगह और किसी भी वक्त मिल सकते थे। भारतके लाखों नरनारियोंके हृदयोंमें उनका घर था, फिर भी सरकार उनकी खोजमें आकाश पाताल एक कर रही थी। हजारों घरोंके द्वार उनके सत्कारके लिए खुले रहते थे। ब्रिटिश सरकारकी पुलिस और कानूनके शिकंजेमेंसे छूटकर भागी हुई इस वीरांगनाको आश्रय देनेमें ऐसे घर एक प्रकारके आनन्द और गौरवका अनुभव करते थे। उनका रूप एक ही होनेपर भी विभिन्न व्यक्तियोंको वे अलग अलग रूपमें दिखाई देती थीं। जब उन्हें सचमुच यह मालूम होता कि यह बहुरूपिणी रमणी अरुणा ही थी तब उनके आश्चर्यका पार न रहता। उनके हृदय इस नारी-रत्नका अभिन

न्दन करते थे। अज्ञातवासमें बधनोंकी दुनियामें वे फिर प्रकाशम आई हैं जहाँ उनका जीवन बीता है,और जहाँ उन्होंने आजादीके सपन देखे हैं। यह भी हमारे स्वागतका एक प्रकार है। उनके लिए आज नया नाजन और नई राहें प्रतीक्षा कर रहा हैं।

सरकारको उनकी दिल्लीकी उपस्थितिका आभास हुआ क्योंकि उस वक्त महिलादलके जरिये लगातार बहुतसे गैरकानूनी पत्र निकल रहे थे उन पर्चोंके द्वारा वे विद्यार्थियोंको नये आन्दोलनके लिए प्रोत्साहन दे रहे थे किन्तु एक ही जगह लगातार बहुत दिनों तक कोई व्यक्ति कैसे छुपा रह सकता है? दिल्लीम कई सभाओंकी अज्ञातवासकी कहानी अब कुछ कुछ ज्ञात हुई है। बहुतोंका कहना है कि वे बुर्का पहिनकर दिल्लीकी मुख्य सड़कों पर घूमती नजर आई थीं। किन्तु जब उनके द्वारा उत्पन्न किया हुआ वातावरण जनता म उग्रतम होता गया तब उनकी खोज भी उतनी ही तेजीसे होने लगी। कई उच्च अधिकारी तो उन्हें ढूढनेके लिए आकाश पाताल एक कर रहे थे, किन्तु कोई भी उनका पता न पा सका। आखिरकार एक अधिकारीने अपने अफसरसे कहा— हम नौ आदमी बड़े दिनोंसे ढूँढ रहे हैं पर कहींसे भी उनके अस्तित्वके चिह्न नहीं पा सके। हम जानते हैं कि वे यहीं हैं, फिर भी उनका पता चलाना बहुत कठिन है। और हम यहाँ कर भी क्या सकते हैं जब दिल्ली के लाखों आदमी एक होकर उन्हें आश्रय दे रहे हों? हम तो ऐसे काममे ऊब उठे हैं!'

एक वक्त आया चिमूरकी घटनाओंके बारेम, जब देशम चारों ओरसे श्री० आर एस अणे पर उस विषयकी जाँच करनेका दबाव डाला गया, और कुछ महिलाएँ प्रतिनिधिके रूपम जब उनसे मिलीं तब वे घबरा कर बोल उठे— मुझे श्रीमती अरुणाके पास ले चलिए म उन्हें सब कुछ समझा दूँगा!'

किन्तु अज्ञातवासका जीवन निरतर आशकाओंसे घिरा हुआ था कल कहाँ डेरा डालना होगा, कहाँ भोजन करना होगा, यह,सब पहलेसे ही निश्चित नहीं किया जा सकता था फिर भी तरह तरहके अनुभवोंके बीचसे गुजर जाने के बाद अज्ञातवासी व्यक्तियोंको परिस्थितिकी गंभीरताकी अमेय-समस्याओं

को मुसलमानेकी समझ धीरे धीरे आ ही जाती है। दूसरी ओर जेल-जीवनमें कइयोंको सुंदर विचारों पर मनन करनेका अमूल्य अवसर मिल जाता है कई बार उनके जीवनमें नई प्रतिभाका भी विकास होता है किंतु अज्ञातवासियोंको कभी भी ऐसा अवसर नहीं मिलता, क्योंकि उनके विचार तो सिर्फ रक्षा और आन्दोलनकी ओर ही केन्द्रित रहते हैं और समय बीतनेके साथ ही साथ उनके विचारोंमें दृढ़ता और अनुभूति आती रहती है।

दिल्ली ब्रिटिश साम्राज्यका अभेद्य दुर्ग है, श्रीमती अरुणाका स्थान और घर भी दिल्लीमें ही है। ए० आई० सी० सी० की बम्बई बैठकमें 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावके पास होनेपर, उनकी गिरफ्तारीका वारण्ट भी बम्बई से ही जारी हुआ था, क्योंकि वे ए० आइ० सी० सी० की बैठकमें शामिल होनेके लिए वहाँ आ गई थीं।

श्री० आसफ अलीको भी महात्माजीके साथ मात्र '६ अगस्ट ४२' को सुबह जेलमें ले जाया गया यह पाँसा एकाएक फेंका गया और इस तरह ब्रिटिश सरकारने देशकी नई उत्तेजित परिस्थितिसे मुकाबला करनेका निर्णय कर लिया था। बहुत दिनों पहिले सर सेम्युअल होरने पार्लिया-मेंण्टमें, ऐसी ही परिस्थिति उत्पन्न होनेपर कहा था कि–'कुत्ता भी नहीं भौंका।'

शायद चर्चिल, एमरी, लिनलिथगो और उनके सहकारियोंने सोचा होगा कि फिर पुराने इतिहासका पुनरावर्तन होगा, किन्तु वे यह न जानते थे कि भारतकी जनता सचमुच एक नये इतिहासका सृजन कर रही है।

नेताओंको गिरफ्तार करके, दूर दूरके पुराने किलोंमें बन्द कर दिया गया। भारतकी सबसे बड़ी जन संस्था कॉंग्रेस पर प्रतिबन्ध लगाया गया और उसे 'गैरकानूनी' घोषित किया गया। नेताओंके अभावमें उनके आदेशोंके बगैर जनता अपनी मर्जीके मुताबिक कार्यक्रम बनाकर अमल करने लगी, जनताका यह दृढ़ निश्चय था कि साम्राज्यवादको अब बगैर मुकाबला किये वह आगे न बढ़ने देगी। उस नाजुक परिस्थितिमें वीरांगना अरुणा और उनके साथियों ने देशकी तात्कालिक स्थितिका नेतृत्व अपने हाथोंमें लिया। 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावके समय जो सूत्र गांधीजीने जनताको दिया था, उसी सूत्रको ज्वलन्त

रखनेके लिए उन्होंने जनताको बताया कि प्रत्येक मनुष्य स्वतन्त्र है, स्वाधीनता से जीओ, और स्वतन्त्र होकर कार्य करो। अरुणा महात्माजीके इस मूल-मन्त्रको अपने जीवनमें उतार लिया, उन्होंने ६ अगस्त ४२ के नाम दिन पहिले कहा था कि— अब हमारे सामने जीवन-मरणका प्रश्न है, हम अब अधिक समय तक इस परिस्थितिमें नहीं रह सकते।' इन्होंने ऐसा ही निर्णय अपने लिए भी कर लिया था। और इससे उनका रास्ता और साफ हो गया। उन्होंने कहा—'आज लोगोंके लिए जीवनमें एक महान् अवसर आया है, जो बार बार नहीं आता उसका सदुपयोग करना आप लोगोंके हाथमें है, विद्रोहमें आदेशकी जरूरत नहीं, यदि हम इस विद्रोहको सही रास्ते पर न ले गये तो असफलता ही हाथ लगेगी। यद्यपि यह कार्य बहुत मुश्किल है फिर भी उसे सीधा और सरल बनाया जा सकता है क्योंकि इस बार छोटे छोटे षड्यन्त्रों और पुराने झगडोंकी जगह एक नया और संयुक्त मोर्चा खड़ा किया जायगा और वही हमारे विद्रोहकी विजयका कारण होगा।'

तबसे वे सचमुच 'वीरांगना' थीं। उनकी आँखें एक अद्भुत ज्योतिसे चमक उठीं थीं, जिनमेंसे साम्राज्यवादको जला देनेके लिए चिनगारियाँ फूट रहीं थीं। वे सिर्फ कार्योंपर विश्वास करती थीं, योजनाओंपर नहीं। उन्होंने जिस कार्यको हाथमें लिया था उसे पूरा करनेके लिए उनमें जरा भी निर्बलता न थी। उन्होंने जाहिर समाजसे विदा ली। जिसके लिए उनके हृदयमें प्रारम्भसे इतना अधिक प्रेम था उसे छोड़नेपर उन्हें जरा भी तकलीफ न हुई। एक बार दिल्लीकी जिस जनतामें वे सितारेकी तरह चमकती थीं अब वहाँ प्रकट न हो सकेंगी? पहले जिस आधुनिक फैशनबल वातावरणमें, और होटलोंमें घूमती थीं अब वे उनके बिना सूनी हो जाएँगी।

अरुणाने अपने कार्यक्षेत्रको चुन लिया था। उन्होंने स्वतन्त्र होनेका निश्चय कर लिया था, और इसके लिए जो यातानामयी और अपने हाथों बुलाये दुखोंसे परिपूर्ण जिन्दगी उन्हें बितानी थी उसे खुशीसे स्वीकार कर लिया। उस वक्त जीवनके उस पहलूको देखना उनके लिए खुशीका विषय था। यह एक प्रकारका अद्भुत परिवर्तन था, जिसकी रूपरेखा सुखसे दुखमें आने

पर, प्रकाशसे अन्धकारमें और सत्से असत्की ओर जानेपर देखी जा सकती थी। अभी तक जनता उन्हें ठीक ठीक पहचानती न थी। यह सच था कि वे बहुत दिनोंसे सार्वजनिक जीवनमें रस लेती थीं, किंतु वह कार्य केवल समाज की परिधि तक ही सीमित था।

यद्यपि असहयोग आन्दोलनके वक्त उन्होंने जेल जीवन बिताया, क्योंकि वे उसे एक पवित्र कर्तव्य समझती थी, तथापि वैसे जीवनमें वे पूरी तरह घुलमिल न गई थीं। तब उन्हें आधुनिकता या फैशनका कुछ मोह था, जिससे वे दिल्लीकी एक प्रतीक मालूम होती थीं।

सबसे पहले उनके व्यक्तित्वका आभास हमें अखिल भारतवर्षीय महिला सम्मेलनमें मिला उस वक्त जो कुछ कठिन कार्य था वह उन्होंने श्री॰सत्यवती देवी पर ही छोड़ दिया था जिसने केवल देश सेवाके लिए अपना सारा जीवन बिता दिया। इन दोनों रमणियोंमें परस्पर प्रगाढ़ प्रेम था। अभी जब अज्ञातवासके बाद अरुणा दिल्ली गईं तो सत्यवतीदेवीके अवसानसे उन्हें घोर दुःख हुआ उनकी जगह सूनी पड़ी थी। जनताका विश्वास है सत्यवतीदेवी के अवसानसे जो अन्धकार छाया है, अरुणा उसे पुनः प्रकाशित करेंगी। सत्यवतीदेवीने जो सफलता शीघ्र ही पा ली थी, उसे अरुणा भी निकट भविष्यमें पा लेंगी।

वीरागना अरुणाके अज्ञातवाससे दिल्लीकी 'सोसायटी' की जितनी हानि हुई उतना ही लाभ जनताको हुआ। पन्द्रह वर्ष पहले, जब काँग्रेस कार्यसमितिकी बैठक कराचीमें हुई थी तब अरुणा एक प्रसन्नचित्त और स्वच्छन्दोपी पक्षीकी तरह लगती थीं, यद्यपि उस समय भी उनकी बुद्धि और प्रतिभा दूसरोंको प्रभावित करती थीं। उस वक्तकी अरुणासे अभीकी 'भारत छोड़ो' वाली अरुणाकी तुलना नहीं की जा सकती। उस वक्त वे श्री॰आसफ-अलीके साथ विवाह ग्रंथिमें बंधी भी नहीं थीं। उनके विवाहने एक सनसनी सी समाजमें फैला दी, क्योंकि वे दोनों एक जैसे ही फैशनेबल थे और साथ ही साथ उनमें अन्य नव दम्पत्तियोंकी तरह चंचलता और प्रसन्नता भी थी। श्री॰ अरुणा भी सब तरहसे अंग्रेजी संस्कारोंसे घिरी हुई थीं और

आसफअली थी, थोड़े ही दिन पहले ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटीसे लौटे थे तथा उनकी व्यक्तिगत प्रतिभा भी आकर्षणका कारण थी।

ये दोनों प्रतिभाएँ मसूरीमें एक दूसरेसे मिलीं, दोनोंमें प्रीतिके अंकुर फूट निकले। वय और आयुकी असमानता भी उनकी प्रीतिमें बाधक न बन सकी। तब इस जोड़ीने विवाहग्रंथिमें बँध जानेका निश्चय किया जो भी उसमें धर्म, समाज, रीतिरिवाज आदिकी रुकावट थी। अरुणा उस वक्त बालिग न होनेके कारण 'सिविलमैरेज' भी न कर सकती थी, क्योंकि उसमें माँ-बापकी सम्मति जरूरत थी। तब एक ही मार्ग था, धार्मिक-रीतिसे विवाह करना। श्री० आसफअलीको इस नवयुवतीमें जीवन-संगिनीके दर्शन होते थे और अरुणाने भी वहाँ एक नये संसारका स्वप्न देखा। तब उसने इस्लाम धर्म स्वीकार किया और प्रसिद्ध मौलवी अहमद सयदने इन दोनोंके जीवनको एक सूत्रसे विवाहग्रंथिमें बाँध दिया।

समाजके लिए जो अरुणा सुन्दर, कमनीय, बुद्धिमान और पुष्पकी तरह सुकुमार थी, वह श्री आसफअलीके लिए एक आदर्श धर्म-पत्नी और जीवन संगिनी थी। किसी अद्भुत क्षणमें उन दोनोंका मिलन हुआ था प्रारम्भमें जिन दो हृदयोंने एक ही सुर और तानमें वह सुना और समझा था कुछ ही दिनों बाद उन्होंने अपना परिचय पति और पत्नीके रूपमें पाया!

वह एक आदर्श 'जोड़ा' था। जब जेलसे छूटनेके बाद, बीमारीकी हालत में आसफअली वापस अपने घर पहुँचे तब अरुणाके बिना वह घर उन्हें शून्य और वीरान लगता था, उस वक्तकी प्रेम हृदय ही जानता है, शब्द नहीं बता सकते।

श्री० आसफअली तो छूट गये किंतु अरुणा कानूनकी पकड़से दूर दूर भागती थीं उस वक्त वे भूमिगत थीं। वह हृदय मंथन था, जिसमें वे अपने अन्तरमें स्वयंको ढूँढ़ रहे थे। जीवनमें विश्वास प्रविष्ट हुआ था और अनुभवोंकी परम्पराने उसे दृढ़ किया था। जब उन्होंने दाम्पत्य-जीवनमें प्रवेश किया तब उनका जीवन कुछ ही मनुष्य या एक विशेष समाजके लिए सीमित था, किंतु 'भारत छोड़ो' प्रस्तावकी प्रतीतिने उन्हें मानव मात्रका बना दिया।

दिल्लीमें उनकी गिरफ्तारीका वारंट निकल चुका था, फिर भी वे जानती थीं कि दिल्लीमें उनके लिए कितने जरूरी काम हैं। चारों ओर पुलिस तलाशमें थी, फिर भी वे दिल्लीमें कैसे प्रविष्ट हुईं यह एक अभेद्य रहस्य है। वे बम्बई छोड़कर निश्चित समयमें दिल्ली न पहुँच सकीं, रास्तेमें ही एकाएक गायब हो गईं। तब कुछ देरके लिए ग्वालियरमें प्रकट हुईं किन्तु ज़्यादा देर वहाँ भी रुक न सकीं। इस तरह पुलिसको भूल भुलैयामें फिराकर वे ब्रिटिश सरकारकी राजधानीमें जा पहुँची, जहाँ हजारोंसे मिलीं भी, किन्तु उन्हें दिखाई भी न दी जो उसे गिरफ्तार कर लेना चाहते थे।

सरकारको, उनके दिल्लीकी उपस्थितिका आभास, लगातार निकलनेवाले गैरकानूनी पर्चोंसे हो रहा था जो उन बुलेटिनोंके जरिये विद्यार्थियोंको नये आन्दोलनके लिए प्रोत्साहित कर रही थीं, लेकिन एक ही जगह बहुत वक्त तक कोई फरार व्यक्ति कैसा छुपा रह सकता है

अब उनके दिमाकके कई सप्ताहोंके गुप्तवासकी कहानी कुछ कुछ मालूम हो सकी है, कई यह कहते थे कि वह बुरखा पहनकर दिल्लीकी खास सड़कोंपर घूमती नजर आई थीं, किन्तु यह बात सम्भव नहीं मालूम होती। जब उनके द्वारा उत्पन्न किया हुआ आन्दोलन उग्र होने लगा तो उसकी छान-बीन भी उतनी ही तेजीसे होने लगी। बहुतसे उच्च अधिकारी भी उन्हें खोजने के लिए आकाश पाताल एक कर रहे थे, किंतु किसीको भी उनका पता न मिल सका। आखिर हारकर एक कर्मचारीने अपने अफसरसे ऊबकर कहा—'हम नौ व्यक्ति एक अर्सेसे उन्हें ढूँढ रहे हैं, किन्तु हमें कहीं भी उनकी उपस्थितिकी गन्ध न मिल सकी, हम यह जानते हैं कि वे यहीं हैं, फिर भी जहाँ सारी दिल्ली उन्हें आसरा देनेको उत्सुक हो तो वहाँ हम लोग क्या कर सकते हैं खोजते खोजते हम लोग ऊब उठे हैं।

दूसरे वक्त जब आष्टी और चिमूरकी घटनाएँ घटीं तब उस मामलेकी ... लिए श्री आर० एस० अणेसे सब लोगोंने अनुरोध किया, और जब ...हेलाओंका एक डेपुटेशन इस बारेमें उनसे मिला तो वे उनसे घबराकर बोले—'मुझे श्रीमती अरुणाके पास ले चलिये मैं उन्हें सब कुछ समझा दूँगा।

किन्तु अज्ञातवासी जीवन, हमेशा आतङ्कसे घिरा रहता था, कल कहाँ डेरा डालना होगा, कहाँ भोजन करना होगा, यह पहिलेसे निश्चित नहीं किया जा सकता था, फिर भी तरह तरहके तजुर्बों और तकलीफोंके बाद ऐसे नागरिकको परिस्थितिकी गम्भीर समस्याओंके निराकरणकी समझ आ जाती है।

दूसरी ओर राजनैतिक कैदियोंको, जेलजीवनमें तो कई सुन्दर विचारोंका भी अवसर मिल सकता है, किन्तु अज्ञातवासियोंके जीवनमें ऐसा कोई अवसर नहीं आता, क्योंकि उनका ध्यान हमेशा आन्दोलनके संचालनकी ओर होता है, इसलिए ऐसे व्यक्ति समयके बीतनेके साथ साथ परिस्थितिके अनुसार निर्णय करनेमें अधिक चतुर हो जाते हैं।

अरुणाके बारेमें भी ऐसा ही हुआ। कांग्रेसके 'भारत छोड़ो' प्रस्तावका रूप और क्षेत्र विस्तृत करनेके लिए इन्होंने जो तकलीफ उठाई थी उसके लिए वे आज भी गौरवान्वित होती हैं। इस बारेमें जितनी घटनाएँ घटीं उसकी जिम्मेदारी उन्होंने कभी भी कबूल न की। आलसी व्यक्ति जो राजनैतिक कार्योंमें प्रवृत्त होते हैं उन्हें जरा भी नहीं सुहाते। वे आन्दोलनकी ज्वालामें से होकर बिना आँचके बाहर आ गई हैं। हाल ही इनके अज्ञातवास समाप्त होनेके बादके भाषणोंमें इनके स्वभावका आवाज निकलता है।

दूसरे नेताओंकी तरह, श्रीमती अरुणा भी यह ख्याल करती हैं कि इन सब नेताओंके छुटकारेके बाद जनताके बलिदानकी कहानी भूली नहीं जानी चाहिए। यदि १९४२ की अगस्त क्रान्तिको यशस्वी बनाना हो तो 'भारत छोड़ो' प्रस्तावको सच करके दिखाना चाहिए। अभी हाल ही इन्होंने जो भाषण दिये हैं उनमेंसे जो भाव निकलता है वह इसे सिद्ध करता है। ब्रिटिश-मालके सम्पूर्ण बहिष्कारसे ही सरकारको पराजित किया जा सकता है। चुनावों और मन्त्रिपद ग्रहण करनेके बाद भी बहिष्कारका यह राजनैतिक शस्त्र कायम रहना चाहिए।

श्रीमती अरुणा भारतकी उच्च आत्मा हैं, इनके व्यक्तित्व और जीवनमें घटनेवाले कई प्रसंग ध्यान देने लायक हैं। इनके अज्ञातवासमें इन्होंने जो समय बिताया उसमें हमें इनके नम्र और कोमल नारीहृदयका आभास मिलता है, ऐसी ही एक घटना यहां वर्णन करने योग्य है।

जब सरकारने इनकी गिरफ्तारीके लिए इनके घरपर नोटिस लगाई

वे इधर उधर घूमती फिरती थीं। उस नोटिसमें निश्चित अवधि तक सरकारके आधीन आनेका आदेश दिया गया था। पर उन्होंने उस आदेशकी अवहेलना की, सरकारकी शरणमें न गई, अज्ञातवासिनी ही रहीं। उनके मकान और मोटरपर सरकारने कब्जा कर लिया। उनके विरुद्ध सरकार द्वारा तीन आरोप लगाये गये थे। सरकारने जेलमें दूसरे राजनैतिक कैदियोंके साथ अपने कुछ व्यक्तियोंको रख कर श्रीमती अरुणाका पता लगानेके बहुत से प्रयत्न कर देखे किन्तु सब व्यर्थ हुए। सी आय डी के आदमियोंकी अपेक्षा अरुणा अधिक चपल थीं। जब अरुणाकी माता उनकी बहिन पूर्णिमा बनर्जीके घर मृत्युशय्यापर पड़ी थीं, तब उन्होंने गुप्तचरोंकी आंखोंमें धूल झोंककर अपनी वृद्ध मातासे अन्तिम भेंट की। किन्तु सरकारी गुप्तचर विभागकी दखरेख चौबीसों घंटे उनकी ओर लगी रहनेके कारण, वे अपनी माताके अन्तिम क्षणोंमें उनके पास न रह सकीं। इनके अज्ञातवासकी अवधिमें ही माताका अवसान हुआ था। जब अज्ञातवास छोड़कर वे अपने घर गई, और वहां माताके कमरेमें पैर रखा तब उनकी पुरानी नौकरानी बसंती दौड़ती हुई आई और उनके पैरोंमें पड़कर कहा कि—'माँ अब न रहीं'

इन शब्दोंने उनकी माताकी पुरानी स्मृतियोंको याद करा दिया, और तब यह वीरांगना बच्चेकी तरह बसन्तीका हाथ पकड़कर रो पड़ी। अरुणाके साथ साथ उनकी बहन पूर्णिमा और बसन्ती बहुत देर तक आंखोंमें आंसू लिए स्तब्ध खड़ी रहीं।

इनके विवाहित जीवनकी घटना भी इतनी ही आश्चर्यजनक है, जो इसी पुस्तकमें पहले लिखी जा चुकी है। जब यह अपनी बहन पूर्णिमाके यहाँ थीं तब आसफ अलीसे इनकी भेंट हुई और वहीं इन दोनोंमें प्रेम ग्रंथि बंध गई। यह प्रीति मिलन परिवारके लोगोंके मत विरुद्ध था, यह लिखनेकी जरूरत नहीं है। श्री० आसफ अली मुसलमान थे, और अरुणा हिन्दू इन दोनोंकी आयुमें भी बहुत अन्तर था। फिर भी अरुणा अपने निश्चयसे न डिगीं उन्होंने विवाहके विरुद्ध किसी भी रायको न माना। जिसके साथ प्रेमकी गांठ बंध गई थी उस पुरुषको ब्याहनेकी क्षमता ही इनमें थी ऐसा ही

नहीं, बल्कि उनका उद्देश्य ऐसे प्रेम विवाहोंको सफल करना भी था। उनका विवाहित जीवन पूर्णरूपसे सुखी है। उन्होंने खुद कई बार कहा है कि आसफ अलीकी अपेक्षा अधिक उदार और विशालहृदय पति कोई हो ही नहीं सकता। यह सब सोचने पर यह नहीं मालूम होता कि गांगुली परिवारने एक नहीं दो नहीं बल्कि तीन तेजस्वी नारी रत्न—अरुणा आसफ अली, पूर्णिमा बॅनर्जी, और नदिता कृपलानी देशको भेंट किए हैं। और ये तीनों अपनी तरह शिक्षित और अपूर्व हैं।

विवाहित जीवनने गंभीर और छिछले सब तरहके प्रश्न अरुणाके रास्तेमें ला दिये थे। अरुणाके पति केवल प्रख्यात नेता ही नहीं बल्कि फारसी और उर्दूके प्रकांड विद्वान भी हैं। अरुणा इन दोनोंमें से एक भाषा नहीं जानतीं, इसलिये फरीद अन्सारी इन्हें रोज चिढ़ाते थे वे कहते थे— भाभी तुम्हें उर्दू बोलना कब आएगा? हमारे आसफ अली तुम पर इतनी बड़ी बड़ी कविताएँ करते हैं कि जिसमें स्याहीका अकाल पड़नेकी संभावना है, और तुम तो इन अमरकृतियोंको समझ भी नहीं सकतीं!'

इस रोजकी चिढ़ावनीका जवाब देनेका निश्चय अरुणाने एक दिन सुबह कर लिया। तब तो उनकी प्रेमभरी सासने अपनी पुत्रवधूको कुछ ही समयमें जितना सिखा दिया वह बम्बई और देशके दूसरे अगली भागोंमें रहने वाले मित्रोंका मजाक उड़ानेके लिए काफ़ी था।

१९३० और ३२ के सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें अरुणाको जेल जीवन बिताना पड़ा। उसी तरह १९४० में भी, और १९४२ में तो ये जिस तरकीबसे भागी और जेलकी दीवालोंको उन्होंने जिस तरह धोखा दिया, वह अद्भुत था।

जब श्री० अरुणाको पहले पहल जेलजीवनका अनुभव हुआ तब एक बातने उन्हें बहुत अधिक आश्चर्यचकित कर दिया। जेलका नाम 'लाहौर फीमेल जेल' था। यह जेल सिर्फ मादा Femaleके लिए ही क्यों थी? 'स्त्रियों या बहनों की जेल,' यह नाम क्यों नहीं रखा गया? इस प्रश्नने इन्हें गंभीर विचारमें डाल दिया। जेलका मनुष्यसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है, किन्तु नौकरशाहीके विशिष्ट व्याकरणके गूढ़ प्रश्नोंको कौन सुलझा सका है?

१९३२ के आन्दोलनके वक्त सजाके साथ २००) दंड भी इनपर किया गया था, जुर्माना न भरने पर उन्होंने जो मनोवैज्ञानिक विचित्रता दिखाई उसने पुलिसको भी विस्मयमें डाल दिया। पुलिसने आसफअली के बैंक-बैलेन्सको जप्त किये मगर अरुणाकी बहुतसी बेशकीमती साड़ियोंको जप्त कर लिया।

जब वे दिल्लीकी डिस्ट्रिक्ट जेलमें थी तब राजनैतिक कैदियोंके साथ बहुत निष्ठुर बर्ताव किया गया। इस बातपर कैदियों और राजनैतिक बंदियोंने विरोध प्रकट किया तब अरुणाने अनशन करना शुरू किया और बीमार हो जाने पर भी नहीं तोड़ा, आखिरकार राजनैतिक कैदियोंकी मांग सरकारको मंजूर करनी पड़ी। किन्तु बादमें सरकारने अरुणासे उनका बदला ले लिया। सरकारने अरुणाको अम्बाला जेल बदल दिया। जहाँ स्त्रियोंके लिए अलग जेल न थी। अरुणाको वहाँ एकान्तवास भुगतना पड़ा।

उसके बाद सबसे बड़ी जानने लायक बात यह है कि अगले दस साल तक अरुणाने राजनीतिमें कोई हिस्सा न लिया, छुटकारेके लिए भी रोज बरोज जो कोशिशें होती थीं उनसे भी वे अलग ही रहीं। किन्तु वह समय साधनाका था जब उनका मुख्य काम पढ़ना, अभ्यास करना, और मनन करना था।—उन्होंने तब कॉंग्रेसकी कमजोरियोंको अति निकटसे देख लिया और तब स्वतन्त्रता के लिए एक नया कार्यक्रम और पद्धति सोची। उन्हें 'भारत छोड़ो, के भीषण दिनोंमें अपनी पद्धतिको आजमानेका मौका मिला साथ ही साथ श्री० जयप्रकाशनारायण, अच्युत पटवर्धन और डा० राममनोहर लोहिया जैसे वीरोंके साथ कार्य करनेका अवसर भी आया। प्रसिद्धि में नहीं तो वीरतामें उन्हें वहाँ सब साथी अपने जैसे ही मिले थे। उस वक्त वे अपने कर्तव्य पर अडिग रहीं इतना ही नहीं चारों ओरसे उनकी प्रशंसाके पुष्प बरसने लगे। उन्होंने अपनी असाधारण निर्भयता और खतरेकी पर्वाह न करने वाले साहससे भारतके वीरतापूर्ण इतिहासमें एक नया अध्याय जोड़ा है। वे कहती हैं—मेरे अज्ञातवाससे प्रकाशमें आनेके बाद मेरी यात्राओं को मैं बहुमूल्य सबक कहूँगी। आज जनता आन्दोलन और मुकाबलेके द्वारा वर्तमान शासनकी अवहेलना करके आजादीको जल्दसे जल्द पाना चाहती है।

हम समझते होंगे उनके विरोध मूत्र अथपूर्ण न होंगे, सिर्फ शब्दा डम्बर होगा, किंतु, ऐसा नहीं है, उन सूत्रोंमें उनकी भावनाका प्रतिबिम्ब झलकता है। वे अपने नेताओंके नामके नारे लगाती हैं—'गांधीजीकी जय' का नाद वे भाषणके प्रारम्भ और अन्तमें रखती हैं, और प्रारम्भ और अंत के बीच सुभाष बाबू, पं जवाहरलाल, शाहनवाज और सहगलके नामकी जय भी आ जाती है। ४२ की क्रांतिके शहीद उन्हें अधिक श्रद्धामय प्रतीत होते हैं, क्योंकि वे स्वयं और वे शहीदप्राय एक ही वय रखते हैं।

"यदि प्रचारका अर्थ ज्ञानको फैलाना हो, और हम मानते हो कि प्रत्येक व्यक्तिको साहित्यके द्वारा नहीं बल्कि भाषणोंके द्वारा हमारी योजनाओंके समाचार मिलने चाहिए, तो हम यह भी जानना चाहिए कि हमारे प्रमुख कार्यकर्त्ताओंका यातायात आने और जानेके सिवा कोई दूसरा उद्देश्य भी होता है।

भीड़का उत्साहपूर्ण नाद, शोरगुल, दर्शनके लिए धक्का-मुक्का और पैरों पड़नेकी आदत लोगोंमें अभी अभी आई है, यदि नेतागण इन बातोंका विरोध करें तो उन्हें अधिकार है कि वे लोगोंको ऐसा करनेसे रोकें, क्योंकि हमें अभी भी सच्चा अनुशासन और उसका सामाजिक मूल्य समझना चाहिए। पर यह कहावत भी है कि—'सब बातोंका अपना वक्त होता है।' इसलिए जिन नेताओंको बहुत दिनोंसे न देखा हो, तो जनता उनके दर्शनके लिए धक्का-मुक्की और हो हल्ला मचाये यह स्वाभाविक है। क्या उन्हें ऐसा करनेका अधिकार नहीं है? यदि सचमुच ही जनता उन लोगोंकी योजनाओंके साथ न हो तो महानसे महान व्यक्तिकी भी उस वक्त क्या दशा होगी?

× × ×

दो रमणियाँ इन दिनों दिल्लीकी शान गिनी जाती हैं, किंतु सच पूछें तो ये दोनों सिर्फ दिल्लीकी न होकर सारे हिन्दुस्तानकी शान हैं। दोनोंने युवावस्थासे ही राष्ट्रीय कार्योंका श्रीगणेश किया था। आज इन दोनोंमेंसे एक श्री०-सत्यवतीदेवी नहीं हैं, और श्री० अरुणा अज्ञातवासमेंसे पुन प्रकट हुई हैं।

यह हम पहले ही बता चुके हैं कि, ४२ की ६ वीं अगस्तको अरुणा अचानक गायब हो गईं थीं। कई सप्ताह वे दिल्लीमें रहीं, और स्थानीय अधिकारियोंके अत्याचारके विरुद्ध अहिंसात्मक प्रतिकार करनेका निश्चय किया। उस वक्त उन्होंने विद्यार्थियोंमें एक नया जोश भर दिया था, दिल्ली के ही विद्यार्थी लड़के लड़कियोंमेंसे उन्होंने कार्यकर्त्ताओंकी सुन्दर टोली बनाई। तब अरुणासे कोई मिलता न था किंतु इनका प्रभाव, प्रेरणा और आदेश अहिंसक आन्दोलनमें दिखाई दे रहे थे।

दिल्ली छोड़नेके बाद अरुणा इधरसे उधर भटकती रहीं, इनके प्रकट और अदृश्य होनेके बारेमें बहुत सी बातें या अफवाहें उड़ती रही थीं, और वह भी यहाँ तक कि एक बार लोगोंके मुँहसे सुना गया था कि वे एक ही वक्त दो अलग अलग स्थानों पर दिखाई दी थीं। यह अफवाह भी उड़ी थी कि वे भारत छोड़कर सुभाष बोसकी आजाद हिन्द सेनामें शामिल हो गई हैं।

पुलिसने उन्हें ढूंढनेकी तनतोड़ मेहनत की और इसी धोखेमें एक मिस्त्री, एक हवाई अफसर, एक गैरेज मालिक और सेक्रेटरिएटके आफिसर तथा इनके सिवा छः दूसरे व्यक्तियोंको, अरुणाके आश्रय देनेकी शकाके नाम पर कई महीने जेलोंमें बिताने पड़े थे।

जब बॅरिस्टर आसफअली जेलसे छूटे तब पुलिस अधिकारियोंको स्वाभाविक ही यह शंका हुई कि शायद अरुणा अपने पतिसे मिलनेका प्रयास करेंगी, इस शंकाके पीछे उन्होंने कई हास्यास्पद भूल और मूर्खताओंका प्रदर्शन किया।

जब श्री० आसफअली बीमारीकी हालतमें दिल्लीके वेलिंग्डन अस्पताल में थे तब, पुलिसको अचानक यह शंका हो गई कि इस वक्त अरुणा ही अपने पतिसे मिलने आई हैं, इस खबरसे बावला होकर एकाएक पुलिसने वेलिंग्डन अस्पताल पर छापा मारा, जब अस्पतालमें तलाश किया गया तब वह स्त्री अरुणा नहीं बल्कि उनकी छोटी बहन पूर्णिमा बॅनर्जी थीं।

दूसरी बार एक चालाक पुलिस अधिकारीको यह सनक सवार हुई कि श्री० अरुणाने अपने रोमान्समें नया परिवर्तन किया है और वे नर्सकी पोशाक पहनकर अस्पतालमें अपने पतिकी सेवा सुश्रूषा कर रही हैं। जब श्री०

आसफअली बम्बईसे हवाई जहाजके द्वारा गिरफ्तार कर लिए गये तब जो नर्स उनके साथ गई थी, वह सचमुच नर्स ही थी या और कोई इसका पता लगानेके लिए काफी दौड़ धूप की गई, अन्तमें एक तरकीबके जरिये उस नर्सकी लम्बाई भी मापी गई, और जब पुलिसने यह जाना कि उसकी ऊँचाई अरुणा से दो इंच कम है, तब ही उसे शान्ति हुई।

सबसे अधिक आश्चर्यजनक और घृणास्पद प्रयास पुलिसने वायसराय भवनके आगे तब किया जब उसे यह शक हुआ आसफअलीके साथ उनके मित्र श्री सीमानीकी पत्नी श्रीमती सीमानी ही थी या अरुणा? एक तरकीब के द्वारा उस पुलिस अफसरने, वायसराय भवनमें होनेवाला चाय पार्टीके वक्त श्रीमती सीमानीके बिलकुल सामने अपनी बैठक पसन्द की। अपनी जेबमेंसे श्रीमती अरुणाका फोटो निकालकर जब वह श्रीमती सीमानीसे मिलाने लगा तब उसे बहुत घबराहट उत्पन्न हुई यह जानकर कि यदि किसीके चेहरे एक दूसरेसे सबसे ज्यादा मिलते हों तो वह थी श्रीमती सीमानी, और श्रीमती आसफअली! अन्तर सिर्फ इतना ही था कि श्रीमती सीमानी श्रीमती अरुणा से दो ही इंच बड़ी थीं।

जब सचमुच श्रीमती अरुणा अपने मुँहसे अपनी बीती हुई साहसभरी कहानियाँ कहेंगी तब वह अत्यधिक रहस्यमय और संसारकी एक अद्भुत कहानी होगी।

हममेंसे बहुतोंको उनसे मिलने और उनकी उस महाकथाके एक भागको जाननेका सौभाग्य मिला होगा, फिर भी वह एक ऐसी रहस्यमयी कहानी है जिसे उनके सिवा कोई भी सम्पूर्णता और उत्तमताके साथ पेश नहीं कर सकता। यह एक ऐसी कहानी है जिसमें तीन वर्षकी कठिन यातनाओं, भीषण साहस, अल्प प्रसन्नता और गहन निराशासे बनी हुई जनक्रांतिका समावेश होता है। ये और ऐसे साहसी व्यक्ति ही तीन तीन वर्षके अंधकार पूर्ण जीवनको सफलतापूर्वक बिता सकते हैं, और यह सब सहन करने पर भी जिनके मुख पर चिंता या उदासीकी एक रेखा भी प्रकट नहीं होती! कुछ ही दिनों पहले स्वतंत्र भारतके पहले आभासकी तरह दिल्लीके कमिश्नरने वीरा-

गनाकी गिरफ्तारीका वारंट रद्द कर दिया है। उनके द्वारा सरकारके प्रति किये गये तथाकथित 'गुनाहों' में दो ही मुख्य थे—एक गैर कानूनी साहित्य प्रकाशित करना, दूसरे निश्चित अवधिमें सरकारकी शरणमें न आना!

इनके छुटकारेका समाचार देशमें विद्युत वेगसे फैल गया। पहले पहल वे कलकत्तामें प्रकट हुईं और वहाँसे स्वतन्त्रता-दिवसके अवसर पर दिल्ली पहुँचीं। जनताने दोनों जगहों पर इनका अपूर्व स्वागत किया। भारतमाताकी यह विद्रोहिणी पुत्री साढ़े तीनवर्षके अज्ञातवासके बाद पुन जनता जनार्दनमें सम्मिलित होनेके लिए मुक्त हुई थीं।

जिसने लोकक्रांतिके समय जनताका नेतृत्व करके क्रांतिके द्वारा सरकार के विरुद्ध थोड़ी बहुत सफलता प्राप्त की, वह यदि पुरानी राजनीतिको पसन्द न करे तो यह स्वाभाविक ही है। अज्ञातवासके आशंका भरे तीन वर्ष गुजारनेके बाद वे राष्ट्रके लिए अपनी जवाबदारियोंके लिए अधिक सचेत और जागृत हैं। फिर भी महात्माजी कहते हैं कि उनकी जबानको संयमकी जरूरत है। अब उनकी आगामी प्रवृत्तियाँ और अधिक प्रेक्षणीय होंगी।

परिशिष्ट

कुछ ही दिनों पहले बम्बई और कराचीमें जो नाविक विद्रोह हुआ था, तब बम्बईमें उपस्थित होनेके कारण अरुणाने नाविकोंकी माँगोंके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करके उन्हें प्रोत्साहन दिया था। महात्मा गांधी, ने 'हरिजन' में अरुणाके इस रुखके प्रति टीका टिप्पणी की और अरुणाके उस प्रोत्साहनको अविवेकपूर्ण और अनुचित बताया। कुछ ही दिन पहले नई दिल्लीमें ता० ४ अप्रैल ४६ को उन्होंने एक पत्र गांधीजीको इस बारेमें दिया था उसका सार ज्योंका त्यों यहाँ दिया जा रहा है—

'यों तो मैं आपके तर्कोंका प्रतिवाद नहीं करना चाहती, किन्तु मेरे प्रतिरोध विषयक तार्किक आधारोंपर, जो आपने अभी हालमें प्रहार किया है उससे मैं कुछ कहनेको बाध्य हुई हूँ इसके लिए मैं तनिक भी दुःख महसूस नहीं करती। हाँ, घटनाओंके सम्बन्धमें मेरे फैसलोंपर आपके विश्वासका अभाव देखकर मैं जरूर हैरतमें आ गई। अगर आप मेरे दिमाग और मुँहमें एक विशेष प्रकारके सिद्धान्तों और विचारधाराओंको जबर्दस्ती ठूँसनेका इरादा करते हों तो मैं यही कहूँगी कि उस व्यक्तिको आप उपेक्षित ही कर दीजिए, जो आपकी दृष्टिमें एक बकवासी बेवकूफसे अधिक और कुछ नहीं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मैं अपने उन तमाम सहयोगियोंकी तरफसे बोलनेका अपना कर्त्तव्य और सौभाग्य समझती हूँ, जो मेरी विचारधाराओंसे पूर्ण रूपसे सहमत हैं, परन्तु अभाग्यकी बात है कि उन्हें वह आजादी प्राप्त नहीं है जिसकी हकदार मैं किसी कदर बन गई हूँ खैर, यह तो विषयका एक दूसरा पहलू है। दस मार्चके 'हरिजन' में आपने लिखा है कि नाविक हड़तालके विषयमें मेरी धारणा काँग्रेसके मौलिक सिद्धान्तोंके सर्वथा प्रतिकूल और अवाञ्छनीय है। प्रस्तुत विषयमें एक औसत काँग्रेसकी 'विचारधाराओं' की जहाँ तक मुझे व्यक्तिगत जानकारी है उसके आधारपर मैं कहूँगी कि आपको बिलकुल गलत समाचार दिये गये। आप कहते हैं और सन् १९२०

के अधिवेशनमें अ० भा० कांग्रेसका यह प्रमुख प्रस्ताव भी था कि अहिंसा-त्मक कार्य प्रणालीका गुर है—अपमान जनक बातोंसे असहयोग करना।' क्या सितम्बर १९४५ का सम्मति सहयोगवाला प्रस्ताव इसीलिए पास किया गया कि जिन अपमान जनक परिस्थियोंने सन् १९४२ में 'भारत छोड़ो' प्रस्तावका आह्वान किया था, उनका अस्तित्व नष्ट हो चुका है? यदि किसी विशिष्ट कार्य प्रणालीकी सामयिकता तथा काल और परिस्थितिपर विचार होता है।' जैसे सन् ४८, सन ४२ नहीं है—तो यह तर्क सिविलियनोंपर भी लागू होना चाहिए था। नाविकों द्वारा संयुक्त इस्तीफा दाखिल करनेके बजाय और प्रहारक असहयोगकी शरण जाना क्या इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है कि एक इस तरहकी नौकरी जो स्पष्ट रूपसे भारतको गुलाम बनाये रखनेके लिए संगठित की गई, के कर्मचारी गुलामीके वातावरणसे पैदा हुए उस भयसे बहुत ऊंचे उठ चुके हैं? क्या गुलामीके अनुशासनको अनैतिक घोषित करना गलत है, पाप है?

आपने आजीवन विदेशी शासनके विरुद्ध विद्रोह करनेका पाठ हम भार-तीयोंको पढ़ाया है। क्या आपको उन सशस्त्र सैनिकोंका, आज़ादीकी लड़ाईमें अनिश्चित किन्तु जोरदार कदम सह्य नहीं? क्या आपको उनसे शिकायत है?

आपने मुझपर यह आरोप लगाया है कि पद ग्रहण करनेवाले कांग्रे सियोंकी बाबत यह कहा है कि वे नाविकोंको उनकी नौकरीपरसे वापस नहीं बुला सकते? बात यह है कि सत्ता हस्तान्तरित होना जब अधूरा है तो कांग्रेस मंत्रि मंडल निश्चय ही नौकरशाहीके हाथमें खिलवाड़ रहेगा। आपके अनुसार ऐसे कांग्रेसी देशकी वास्तविक सेवा करेंगे। अगर वे वाकिफ किये हुए कोर्टस ऐसा कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि सम्राटकी सरकारका एक अदना सिपाही युद्ध कारगर न हो। जीविकाके लिए नौकरी करना कोई वीरताका काम नहीं है, मैं मानती हूँ। किंतु अगर इस तरहका श्रमजीवी अपने अपमानमें देशका अपमान मानता है तो मेरी समझमें नहीं आता कि आप उसे 'खिलाफत' करनेका अधिकार' क्यों नहीं देते? 'विद्रोह' शब्दका सेनामें विशेष महत्त्व है, उसका कोई भी प्रतिकूल विद्रोह हो सकता है।

इस्तीफा देनेसे तो वह भगोड़ा कहा जाएगा । यह है नैतिक हड़तालकी व्याख्या ।

आप क्या मेरे इस लम्बे उत्तरके लिए मुझे क्षमा न करेंगे ?

— — —

बड़ा प्रसन्नताकी बात है कि वीरांगना अरुणा अपने अज्ञातवासके पश्चात्‌के भाषणोंमें समाजवादी नेताओंके छुटकारेके लिए सरकार और विशेष कर कांग्रेसके लिए जो निवेदन और वक्तव्य दिये थे वे विभिन्न प्रांतोंमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनाके बाद ही छोड़ दिये गये हैं इस तरह अरुणाका कांग्रेसीमन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनाके प्रति जो अविश्वास था वह एक तरहसे दूर सा हो गया है ।

बम्बईमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलकी स्थापनाके बाद ता ३ अप्रेलको प्रसिद्ध समाजवादी कार्यकर्त्री कुमारी उषामेहताको छोड़ दिया गया साथ ही प्रसिद्ध अज्ञातवासी नेतागण श्री० अच्युत पटवर्धन और छोटूभाई पुराणी आदिका वारन्ट भी रद्द किया गया ।

मंत्री मिशनसे गांधीजीकी वार्ताके फलस्वरूप समाजवादी नेता श्री० जयप्रकाशनारायण और डॉ राममनोहर लोहिया, ता ११ अप्रेल १९४६ को आगरा सेन्ट्रल जेलसे छोड़ दिये गये हैं ।



के अधिवेशनमें अ० भा० कॉंग्रेसका यह प्रमुख प्रस्ताव भी था कि अहिंसात्मक कार्य प्रणालीका गुर है—अपमान जनक बातोंसे असहयोग करना।' क्या सितम्बर १९४५ का प्रभवित सहयोगवाला प्रस्ताव इसीलिए पास किया गया कि जिन अपमान जनक परिस्थियोंने सन १९४२ में 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावका आह्वाहन किया था, उनका अस्तित्त्व नष्ट हो चुका है ? यदि किसी विशिष्ट कार्य प्रणालीकी सामयिकता तथा काल और परिस्थितिपर विचार होता है !' जैसे सन् ४१, सन ४२ नहीं है—तो यह तर्क विद्रोहियोंपर भी लागू होना चाहिए था। नाविका द्वारा सयुक्त इस्तीफा दाखिल करनेके बजाय और प्रकारके असहयोगकी शरण जाना क्या इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है कि एक इस तरहकी नौकरी जो स्पष्ट रूपसे भारतको गुलाम बनाये रखनेके लिए संगठित की गई, के कर्मचारी गुलामीके वातावरणसे पैदा हुए उस भयसे बहुत ऊंचे उठ चुके हैं ? क्या गुलामीके अनुशासनको अनैतिक घोषित करना गलत है, पाप है ?

आपने आजीवन विदेशी शासनके विरुद्ध विद्रोह करनेका पा हम भारतीयोंको पढ़ाया है। क्या आपको उन सशस्त्र सैनिकोंका, आज डीरी लड़ाईमें अनिश्चित किन्तु जोरदार कदम सह्य नहीं ? क्या आपको उनसे शिकायत है ?

आपने मुझपर यह आरोप लगाया है कि पद ग्रहण करनेवाले काँग्रेसियोंकी बाबत यह कहा है कि वे नाविकोंको उनकी नौकरीपरसे वापस नहीं बुला सकते ? बात यह है कि सत्ता हस्तान्तरित होना जब अधूरा है तो कांग्रेस मंत्रि मंडल निश्चय ही नौकरशाहीके हाथमें खिलवाड़ रहेगा। आपके अनुसार ऐसे काँग्रेसी देशकी वास्तविक सेवा करेंगे। अगर वे वार्निश किये हुए कदम ऐसा कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि सम्राट्की सरकारका एक अदना सिपाही कुछ कारगर न हो। जीविकाके लिए नौकरी करना कोई वीरताका काम नहीं है, मैं मानती हूँ। किंतु अगर इस तरहका श्रमजीवी अपने अपमानमें देशका अपमान मानता है तो मेरी समझमें नहीं आता कि आप उसे 'खिलाफत' करनेका अधिकार क्यों नहीं देते ? 'विद्रोह' शब्दका सेनामें विशेष महत्त्व है, उनका कोई भी प्रतिकूल विरोध हो सकता है।

दलीलें देनेसे तो वह अधीरता कहा जायगा । यह है रोमांचक हकीकतकी व्याख्या

आप क्या मेरे इस लम्बे उत्तरके लिए मुझे क्षमा न करेंगे ।

यहां उल्लेखनीय बात है कि वीरांगना अरुणाने अपने अज्ञातवासके दरम्यान भूतपूर्व समाजवादी नेताओंके छुटकारेके लिए सरकार और विशेष कर कांग्रेसके लिए जो निवेदन और वक्तव्य दिये थे, वे विभिन्न प्रान्तोंमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनाके बाद ही छोड़ दिये गये हैं, इस तरह अरुणाका कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनाके प्रति जो अविश्वास था वह एक तरहसे दूर हो गया है ।

बम्बईमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलकी स्थापनाके बाद ता० ३ अप्रैलको प्रसिद्ध समाजवादी कार्यकर्त्री कुमारी उषामेहताको छोड़ दिया गया, साथ ही प्रसिद्ध अज्ञातवासी नेतागण श्री० अच्युत पटवर्धन और छोटूभाई पुराणी आदिका वारन्ट भी रद्द किया गया ।

मन्त्री मिशनसे गांधीजीकी बातोंके फलस्वरूप समाजवादी नेता श्री० जयप्रकाशनारायण और डॉ० राममनोहर लोहिया, ता० ११ अप्रैल १९४६ को आगरा सेन्ट्रल जेलसे छोड़ दिये गये हैं ।

—★—